अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-42, अंक-08, 1-15 दिसंबर, 2018

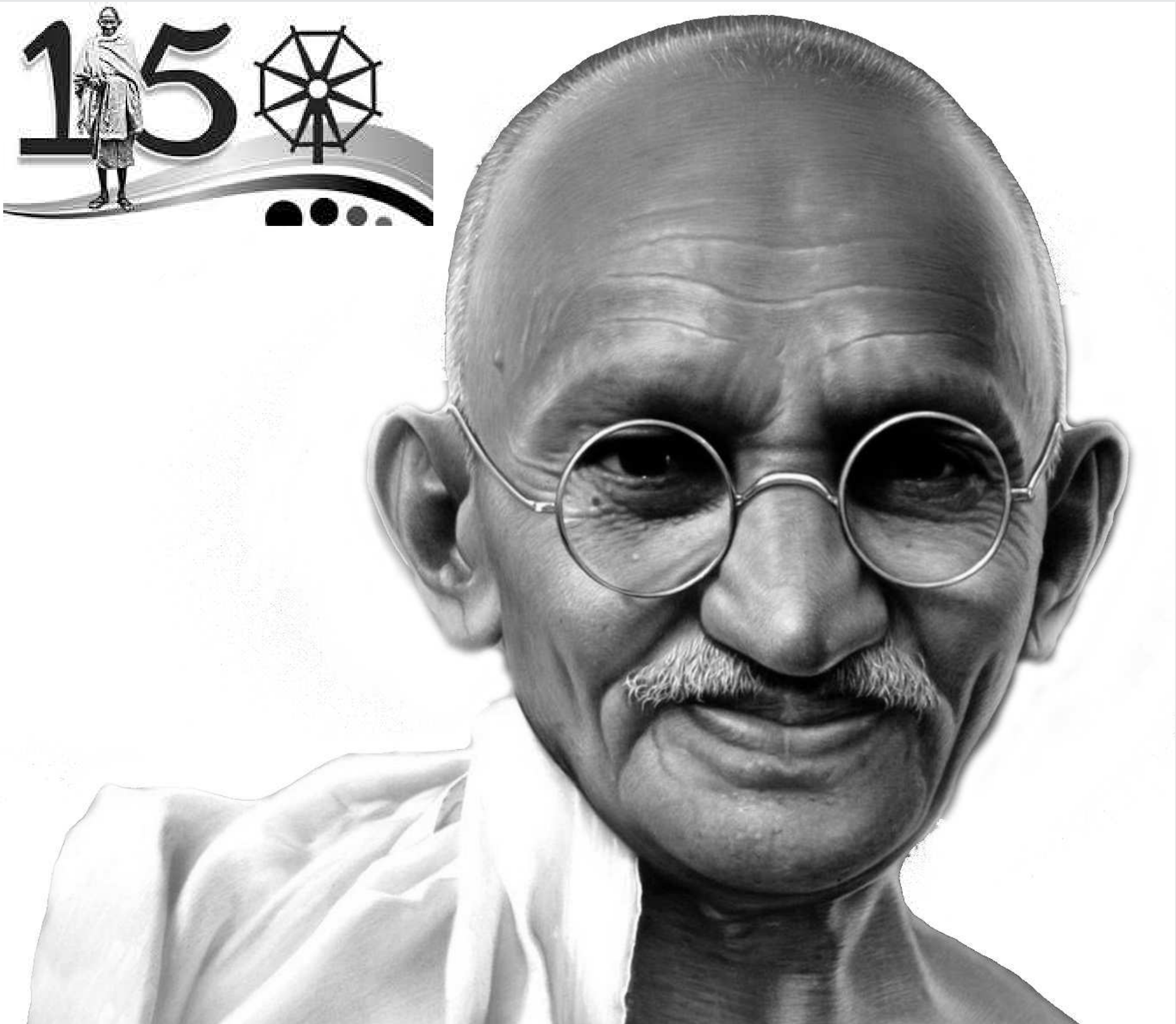

‘ यदि मालिक वर्ग अमानतदारी को स्वेच्छा से स्वीकार नहीं करता तो जनमत के दबाव से उसमें परिवर्तन लाना चाहिए।’

- महात्मा गांधी

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 42, अंक : 08, 1-15 दिसंबर, 2018

संपादक
अशोक मोती
फोन : 0542-2440223

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह   भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. पूंजीवाद, संपत्ति और स्वामित्व... 2
2. गांवों की अर्थरचना... 3
3. स्त्री-शक्ति : कीर्ति श्री... 5
4. सारी संपत्ति अमानत है... 6
5. देश के नये कर्णधार या तस्कर?... 9
6. विकास की वेदी पर कितनी और... 13
7. आजकल विकास का मतलब लूट... 15
8. उपन्यास - 'बा' - भारत वापसी... 17
9. नज़्म... 20

संपादकीय

पूंजीवाद, संपत्ति और स्वामित्व

एक फ्रांसीसी दार्शनिक ने संपत्ति के बारे में कहा—''सारी संपत्ति चोरी है।'' गांधीवादी प्रखर चिन्तक दादा धर्माधिकारी ने धर्मयुग के लिए साक्षात्कार देते हुए कहा था—''जहां व्यापार है, वहां नैतिकता नहीं है। जहां नैतिकता नहीं है, वहां अनैतिकता तो चलेगी न।'' संत विनोबा ने सभी प्राकृतिक संपदाओं को ईश्वर का माना—''सबै भूमि गोपाल की'' कहा। गांधी ने कहा—''सभी संपत्ति अमानत है।''...और जेपी ने सारी संपत्ति और संपदाओं पर सामाजिक स्वामित्व की बात कही।

पूंजीवाद, व्यापार, संपत्ति और उसके स्वामित्व तथा नैतिकता का प्रश्न आज देश में इसलिए उठा है कि अमीरी और गरीबी की खाईं अत्यधिक बढ़ गयी है। अमीर और अमीर होते जा रहे हैं और गरीब और गरीब। गांधी के सपनों का भारत, जो गांव का भारत है वह गांव, किसान और किसानी संकट में है। देश का 22% जीडीपी 121 अरबपतियों के पास है और किसानों की आय प्रतिदिन के हिसाब से 161 रुपये से भी नीचे आ गयी है। नोटबंदी से किसानों तथा छोटे व्यापारियों की कमर टूट गयी है, जिसे केन्द्रीय कृषि मंत्रालय ने स्वयं स्वीकारा है। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना तथा प्रधानमंत्री मुद्रा योजना बैंक में घोटाले की आशंका व्यक्त की गयी है। यानी 'व्हायब्रेंट गुजरात' मॉडल के अंतर्गत चल रही सरकार में अडानी और अंबानी की जादुई प्रगति हुई है।

फोर्ब्स पत्रिका ने रिलायंस इंडस्ट्रीज के चेयरमैन मुकेश अंबानी को 3 लाख 48 हजार करोड़ की संपत्ति के साथ लगातार ग्यारहवें साल सबसे अमीर भारतीय घोषित किया है। इस साल की अंबानी की संपत्ति में लगभग 69 हजार करोड़ रुपये की वृद्धि हुई है। एक तरफ विश्व में भारतीय रुपया कमजोर हुआ है तो दूसरी तरफ भारत के शीर्ष 100 अमीर अपनी संपत्ति बचाने रखने में सफल हुए हैं। स्पष्टतः जनता की प्रतिष्ठा के लिए सरकार कुछ नहीं करती। वह खुद एक व्यापारी है और व्यापारियों के हित में कुछ करने के लिए उदत्त रहती है। कम मेहनत ज्यादा लाभ पाने वाली व्यवस्था के पोषण से यह व्यवस्था सट्टा राज का रूप ग्रहण कर रही है।

अमेरिका जहां से पूंजीवाद की शुरुआत हुई, वह आज व्यापार संरक्षणवाद की वैशाखी थामने को मजबूर है। इसलिए विकास के नाम पर भारत में भी देश को पूंजीपतियों के हाथ सौंपने का प्रयास हो रहा है। व्यापारियों और पूंजीपतियों के विकास की अवधारणा को ऐन केन प्रकारेण आगे बढ़ाने का सीधा अर्थ है, इस विकास के कमीशन में से जो पैसे आते हैं, उससे राजनीतिक दलों के चुनाव के खर्च निकाले जायं। '74 आंदोलन में जेपी ने इस ओर ध्यान दिलाते हुए भ्रष्टाचार की गंगोत्री ऊपर बताया था कि चुनाव खर्च उगाहने के लिए पूंजीपतियों से मिलकर भ्रष्टाचार हो रहे हैं। मनचाहे रूप में सांसदों, जनप्रतिनिधियों के वेतन बढ़ाने, पेंशन देने तथा व्यापारियों से अकूत धन राजनीतिक दलों को प्राप्त कराने की प्रक्रिया तथा इसका अंकेक्षण और लेखा-जोखा न कराने की छूट भ्रष्टाचार को स्पष्ट करती है।

सकल राष्ट्रीय आय बढ़ने के बावजूद बेरोजगारी की समस्या सुलझ नहीं रही। जनता जैसे सिर्फ टैक्स भरने के लिए ही है। एक महीने से 'क्रुडऑयल' 25 प्रतिशत सस्ता हुआ लेकिन पेट्रोल, डीजल के उपभोक्ताओं को 8 फीसदी की राहत ही दी गयी। बेरोजगार रेलवे लाइन पर कूदकर अपनी जान देने लगे हैं। किसान अपने ऋण का भुगतान न कर पाने के कारण आत्महत्या पर उतारू हैं। दूसरी ओर हजारों-हजार करोड़ का ऋण लेकर देश से भागने वाले व्यापारियों की संख्या बढ़ती जा रही है। राष्ट्रीय सूचना आयुक्त ने रिजर्व बैंक तथा प्रधानमंत्री कार्यालय द्वारा इसे रोकने की दिशा में की गयी कार्रवाई की जानकारी मांगी है। इसके अतिरिक्त रक्षा सौदे में भी शक की निगाहें उठ रही है। योजना आयोग को भंग करने, नोटबंदी करने, जीएसटी लगाने, रिजर्व बैंक की स्वायत्तता पर प्रहार करने में किस अनुसंधान और रिपोर्ट का सहारा लिया गया, अभी तक देश को नहीं बताया जा रहा है। शीर्ष जांच एजेंसी सीबीआई के भ्रष्टाचार का मामला सर्वोच्च न्यायालय में पहुंच चुका है।

फिर भी 'याराना पूंजीवाद' के पक्षधर सत्तासीन राजनेता गांधी-बिड़ला संबंध की तुलना पूंजीपतियों से अपने संबंध का करते हैं, जो हास्यास्पद ही नहीं बल्कि इसे छोटा मुंह, बड़ी बात की संज्ञा दी जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। सबसे बड़ा सवाल यह है कि गांधी किन लोगों के पक्ष में खड़े थे और आज के राजनेता किन लोगों के पक्ष में खड़े हैं? गांधी ने मुनाफा समाज का माना, आप पूंजीपति का मानते हो जो उसका है नहीं। उचित परिश्रम के बिना उपभोग की सुविधा जिस व्यवस्था में है वह रामराज नहीं है। सट्टाराज है। सामाजिक नेता का अधिकार नैतिक होना चाहिए। गांधी ने रामराज की विशेषता बतलाते हुए कहा था—''मेरे सपनों के रामराज में राजा और रंक दोनों का रुतबा बराबरी का होगा।'' इसका सीधा अर्थ है राजा और रंक में भेद नहीं होगा। पूंजीपतियों के साथ अपने संबंध की तुलना गांधी-बिड़ला से करने वाले या तो भूल गये हैं या जानते ही नहीं कि गांधी ने अमानतदारी का फार्मूला बिड़ला के द्वारा भारतीय पूंजीपतियों→

गांवों की अर्थ-रचना

❑ गांधी

(अभी) शहरों द्वारा ग्रामीणों का शोषण और उनकी संपत्ति का हरण हो रहा है...मेरी योजना के अंतर्गत, ऐसी कोई चीज शहरों द्वारा नहीं बनाने दी जायेगी, जो उतनी ही अच्छी तरह गांवों में बनायी जा सकती हो। शहरों का सही उपयोग यह है कि ये गांवों में बनी हुई चीजों के निकास के केन्द्र हों।...गांवों को निश्चित रूप से स्वावलंबी बनना चाहिए। अगर हमें अहिंसा की दृष्टि से काम करना हो, तो इसके सिवा मैं उसका कोई हल नहीं देखता।

गांवों में फिर से जान तभी आ सकती है, जब वहां की लूट-खसोट रुक जाय। बड़े पैमाने पर माल की पैदावार जरूर ही व्यापारिक प्रतिस्पर्द्धा तथा माल निकालने की धुन के साथ-साथ गांवों की प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से होने वाली लूट के लिए जिम्मेवार है। इसलिए हमें इस बात की सबसे ज्यादा कोशिश करनी चाहिए कि गांव हर बात में स्वावलंबी और स्वयंपूर्ण हो जायं। वे अपनी जरूरतें पूरी करने भर के लिए चीजें तैयार करें। ग्रामोद्योग के इस अंग की अगर अच्छी तरह रक्षा की जाय, तो फिर भले ही देहाती लोग आजकल के उन यंत्रों और औजारों से भी काम ले सकते हैं, जिन्हें वे बना और खरीद सकते हैं। शर्त सिर्फ यही है कि दूसरों को लूटने के लिए उनका उपयोग नहीं होना चाहिए।

ग्रामोद्योग की योजना के पीछे मेरी कल्पना तो यह है कि हमें अपनी रोजमर्रा की आवश्यकताएं गांवों की बनी चीजों से ही पूरी करनी चाहिए और जहां यह मालूम हो कि अमुक चीजें गांवों में मिलती ही नहीं, वहां हमें यह देखना चाहिए कि उन चीजों को थोड़े परिश्रम और संगठन से बनाकर गांव वाले उनसे कुछ मुनाफा उठा सकते हैं या नहीं। मुनाफे का अंदाज लगाने में हमें अपना (निजी) नहीं, किन्तु (पूरे) गांव का खयाल रखना चाहिए। संभव है कि शुरू में हमें साधारण भाव से कुछ अधिक देना पड़े और चीज हलकी मिले। पर अगर हम उन चीजों के बनाने वालों के काम में रस लें और यह आग्रह रखें कि वे बढ़िया-से-बढ़िया चीजें तैयार करें, और सिर्फ आग्रह ही न रखें, बल्कि उन लोगों को पूरी मदद भी दें, तो यह हो नहीं सकता कि गांवों की बनी चीजों में दिन-दिन तरक्की न होती जाय।...ग्रामोद्योगों का यदि लोप हो गया, तो भारत के सात लाख गांवों का सर्वनाश ही समझिए।

ग्रामोद्योग-संबंधी मेरी प्रस्ताविक योजना पर जो टीकाएं हुई हैं, उन्हें मैंने पढ़ा है। कइयों ने तो मुझे यह सलाह दी है कि मनुष्य की अन्वेषण-बुद्धि ने प्रकृति की जिन शक्तियों को अपने वश में कर लिया है, उनका उपयोग करने से ही गांवों की मुक्ति होगी। उन आलोचकों का यह कहना है कि प्रगतिशील पश्चिम में जिस तरह पानी, हवा, तेल और बिजली का पूरा-पूरा उपयोग हो रहा है, उसी तरह हमें भी इन चीजों को काम में लाना चाहिए। वे कहते हैं कि इन गुप्त प्राकृतिक शक्तियों पर कब्जा कर लेने से प्रत्येक अमेरिकावासी 33 गुलामों को रख सकता है,

---

→के पास स्वीकृति के लिए भेजा था। दुर्भाग्यवश इसके पश्चात् गांधी की हत्या हो गयी। गांधी ने बिड़ला की संपत्ति बढ़ाने के लिए कुछ नहीं किया बल्कि देश की आजादी और विकास में उनका योगदान प्राप्त किया था। गांधी ने 1903 में ही दक्षिण अफ्रीका में ट्रस्टीशिप या अमानतदारी के सिद्धांत का प्रतिपादन किया था और बताया था कि इस सिद्धांत में धन की वासना नहीं है। जो भी व्यक्ति आवश्यकता से अधिक संपत्ति एकत्रित करता है, उसे ट्रस्टी के रूप में रखना चाहिए और धरोहर समझकर समाज कल्याण के लिए प्रबंध करना चाहिए।

स्पष्टतः समाज का हरएक व्यक्ति यदि अपने लिए जिये तो सब मिलकर सबके लिए नहीं जियेंगे। हरएक अपने लिए जियेगा और अपने जीने के लिए दूसरों को जीने में रुकावट भी डालेगा। स्वार्थों के इसी विरोध में से ही सारी उलझने और दिक्कतें समाज में पैदा हुई हैं। सबसे बड़ा मतभेद है धन बढ़ाने की मर्यादा और रीति के संबंध में। गांधी के संयम को न अपनाने के कारण गांव, शहर और देश के विकास की दिशा ही बदल गयी है। विकास का अर्थ ही बदल गया है।

भारत का अर्वाचीन इतिहास पलटें तो स्पष्ट होगा कि व्यापारियों ने ही हिन्दुस्तान को अंग्रेजों को सौंपा था। अंग्रेज तो बहुत प्रतिकूल परिस्थिति में बहुत साहस करके यहां आये थे। संपन्न, उच्च वर्ग और महाजन, यहां के कारीगर, मजदूरों और किसानों को घृणित निगाह से ही देखते थे और वे जनता के विषय में बड़े बेपरवाह थे। यहां पनपा भ्रष्टाचार भी ईस्ट इंडिया कंपनी की ही देन है, जो उसने अंग्रेजों के भारतीय विरोधियों को लुभाने के लिए प्रारंभ किया था। व्यापार की प्रगति के लिए अंग्रेजों ने अव्यवस्था, भ्रम, घूस, भ्रष्टाचार और दोहन की बड़ी प्रभावकारी प्रक्रिया प्रारंभ की थी, जिस जाल में फंसने वाले व्यक्ति चाहे वह महाजन हो, जमींदार हो या नवाब या राजे-महाराजे या कोई संगठन जो अंग्रेजी राज के विरोधी नहीं थे, वे सभी उसी भ्रष्टाचार की उपज रहे हैं। देश की आजादी और स्वराज्य के उदय के बाद भी उस इतिहास से व्यापारियों और सरकार ने सबक नहीं ली, जो अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है।

गांधी का अर्थशास्त्र संपूर्ण समाज के हित का अर्थशास्त्र है। इसमें विकास और उत्पादन का स्वरूप सामाजिक आवश्यकताओं पर आधारित होगा न कि व्यक्तिगत और न राजनीतिक दलों की सनक या लाभ पर आधारित। पूंजीपतियों को यह समझना चाहिए कि गांधी की अमानतदारी का सिद्धांत पूंजीपतियों को दरिद्र बनाने का सिद्धांत नहीं है, वह उसकी प्रतिभा को सबकी भलाई के लिए उपयोग करने की प्रेरणा और अवसर देता है। अतः गांधी ने पूंजीपतियों को एक तरफ अपने अतिरिक्त संग्रह को स्वेच्छा से छोड़ने तथा हृदय परिवर्तन की सलाह दी है तो दूसरी ओर कठोर स्वामित्व से चिपके रहने वालों को चेतावनी भी दी है—''यदि मालिक वर्ग अमानतदारी को स्वेच्छा से स्वीकार नहीं करता तो जनमत के दबाव से उसमें परिवर्तन लाना चाहिए।''

हम गांधीजनों को जनमत के इस दबाव को बढ़ाने में एकजुट होकर लग जाना चाहिए।

–अशोक मोती

अर्थात् 33 गुलामों का काम वह इन शक्तियों द्वारा ले सकता है।

इस रास्ते अगर हम हिन्दुस्तान में चलें, तो मैं यह बेधड़क कह सकता हूं कि प्रत्येक मनुष्य को 33 गुलाम मिलने के बजाय इस मुल्क के एक-एक मनुष्य की गुलामी 33 गुनी बढ़ जायेगी।

यंत्रों का स्थान : यंत्रों से काम लेना उसी अवस्था में अच्छा होता है, जबकि किसी निर्धारित काम को पूरा करने के लिए आदमी बहुत ही कम हों या नपे-तुले हों। पर यह बात हिन्दुस्तान में तो है नहीं। यहां काम के लिए जितने आदमी चाहिए, उनसे कहीं अधिक बेकार पड़े हुए हैं। इसलिए उद्योगों के यंत्रीकरण से यहां की बेकारी घटेगी या बढ़ेगी? कुछ वर्गगज जमीन खोदने के लिए मैं हल का (भी) उपयोग नहीं करूंगा। (उतनी जमीन हाथ से खोदी जा सकती है।) हमारे यहां सवाल यह नहीं है कि हमारे गांवों में जो लाखों-करोड़ों आदमी पड़े हैं, उन्हें परिश्रम की चक्की से निकालकर किस तरह छुट्टी दिलायी जाय, बल्कि यह है कि उन्हें साल में जो कुछ महीनों का समय यों ही बैठे-बैठे आलस में (और अतः गरीबी में) बिताना पड़ता है, उसका उपयोग कैसे किया जाय।

कुछ लोगों को मेरी यह बात शायद विचित्र लगेगी, पर दरअसल बात यह है कि प्रत्येक (कपड़ा) मिल सामान्यतः आज गांवों की जनता के लिए त्रास रूप हो रही है। उनकी रोजी पर ये मायाविनी मिलें छापा मार रही हैं। मैंने बारीकी से आंकड़े एकत्र नहीं किये, पर इतना तो कह ही सकता हूं कि गांवों में बैठकर कम-से-कम दस मजदूर जितना काम करते हैं, उतना ही काम मिल का एक मजदूर करता है। इसे यों भी कह सकते हैं कि दस आदमियों की रोजी छीनकर यह एक आदमी गांव में जितना कमाता था, उससे कहीं अधिक कमा रहा है। इस तरह कताई और बुनाई की मिलों ने गांवों के लोगों की जीविका का एक बड़ा भारी साधन छीन लिया है।

ऊपर की दलील का यह कोई जवाब नहीं है कि ये मिलें जो कपड़ा तैयार करती हैं वह अधिक अच्छा और काफी सस्ता होता है। कारण यह है कि इन मिलों ने अगर हजारों मजदूरों का धंधा छीनकर उन्हें बेकार बना दिया है, तो सस्ते से सस्ता मिल का कपड़ा गांवों की बनी हुई महंगी खादी से भी ज्यादा महंगा है। कोयले की खान में काम करने वाले मजदूर जहां रहते हैं, वहीं वे कोयले का उपयोग कर सकते हैं, इसलिए उन्हें कोयला महंगा नहीं पड़ता। इसी तरह जो ग्रामवासी अपनी जरूरत भर के लिए खुद खादी बना लेता है, उसे वह महंगी नहीं पड़ती। मिलों का बना कपड़ा अगर गांवों के लोगों को बेकार बना रहा है, तो चावल कूटने और आटा पीसने की मिलें हजारों स्त्रियों की न केवल रोजी ही छीन रही हैं, बल्कि बदले में तमाम जनता के स्वास्थ्य को हानि भी पहुंचा रही हैं। जहां लोगों को मांस खाने में कोई आपत्ति न हो और जहां मांसाहार पुसाता हो, वहां मैदा और पॉलिशदार चावल से शायद हानि न होती हो। लेकिन हमारे देश में, जहां करोड़ों आदमी ऐसे हैं जो मांस मिले तो खाने में आपत्ति नहीं करेंगे, पर जिन्हें मांस मिलता ही नहीं, उन्हें हाथ की चक्की के पिसे हुए गेहूं के आटे और हाथ-कुटे चावल के पौष्टिक तथा जीवनप्रद तत्त्वों से वंचित रखना एक प्रकार का पाप है। इसलिए डॉक्टरों तथा दूसरे आहार-विशेषज्ञों को चाहिए कि मैदे और मिल के कुटे पॉलिशदार चावल से लोगों के स्वास्थ्य को जो हानि हो रही है, उससे वे जनता को आगाह कर दें।

मैंने सहज ही नजर में आने वाली जो कुछ मोटी-मोटी बातों की तरफ यहां ध्यान खींचा है, उसका उद्देश्य यही है कि अगर ग्रामवासियों को कुछ काम देना है, तो वह यंत्रों के द्वारा संभव नहीं है। उनके उद्धार का सच्चा मार्ग तो यही है कि जिन उद्योग-धंधों को वे अब तक किसी कदर करते चले आ रहे हैं, उन्हीं को भली-भांति जीवित किया जाय।

उद्योगवाद का अभिशाप : दुनिया में ऐसे विवेकी पुरुषों की संख्या लगातार बढ़ रही है, जो इस सभ्यता को—जिसके एक छोर पर तो भौतिक समृद्धि की कभी तृप्त न होने वाली आकांक्षा है और दूसरे छोर पर उसके फलस्वरूप पैदा होने वाला युद्ध है—अविश्वास की निगाह से देखते हैं। लेकिन यह समस्या अच्छी हो या बुरी, भारत का पश्चिम जैसा उद्योगीकरण करने की क्या जरूरत है? पश्चिमी सभ्यता शहरी सभ्यता है। इंग्लैंड और इटली जैसे छोटे देश अपनी व्यवस्थाओं का शहरीकरण कर सकते हैं। अमेरिका बड़ा देश है, किन्तु उसकी आबादी बहुत विरल है। इसलिए उसे भी शायद वैसा ही करना पड़ेगा। लेकिन कोई भी आदमी यदि सोचेगा तो यह मानेगा कि भारत जैसे बड़े देश को, जिसकी आबादी बहुत ज्यादा बड़ी है और जिसमें ग्राम-जीवन की ऐसी पुरानी परंपराएं पोषित हुई हैं जो उसकी आवश्यकताओं को बराबर पूरा करती आयी हैं, पश्चिमी नमूने की नकल करने की कोई जरूरत नहीं है और न उसे ऐसी नकल करनी चाहिए। विशेष परिस्थितियों वाले किसी एक देश के लिए जो बात अच्छी है, वह भिन्न परिस्थिति वाले किसी दूसरे देश के लिए भी अच्छी ही हो, यह जरूरी नहीं है। जो किसी एक आदमी के लिए पोषक आहार का काम देती हो, वही दूसरे के लिए जहर जैसी सिद्ध होती है। किसी देश की संस्कृति को निर्धारित करने में उसके प्राकृतिक भूगोल का प्रमुख हिस्सा होता है। ध्रुव प्रदेश के निवासी के लिए ऊनी कोट जरूरी हो सकता है, लेकिन भूमध्य-रेखावर्ती प्रदेशों के निवासियों का तो उससे दम ही घुट जायेगा।

सामान्य बुद्धि रखने वाले व्यक्ति की हैसियत से मैं जानता हूं कि मनुष्य उद्योग के बिना जिन्दा नहीं रह सकता। इसलिए मैं उद्योगीकरण के खिलाफ नहीं हो सकता। लेकिन यंत्रोद्योग के बारे में एक बड़ी चिन्ता है। यंत्र से उत्पादन बहुत तेजी से होता है और उसके साथ इस प्रकार की अर्थ-व्यवस्था आ जाती है जिसको मैं समझ नहीं सकता। मैं ऐसी चीज को स्वीकार नहीं कर सकता, जिसके बुरे परिणामों को मैं उससे होने वाले लाभ की अपेक्षा ज्यादा पाता हूं। मैं चाहता हूं, हमारे देश के करोड़ों बेजबान लोग स्वस्थ और सुखी हों और आध्यात्मिक दृष्टि से उनका विकास हो। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अभी तक हमें यंत्रों की आवश्यकता नहीं है। हमारे यहां अभी भी बहुत हाथ, बहुत ज्यादा हाथ, बेकार है। लेकिन जब हमारा बौद्धिक विकास हो जायेगा और हमें महसूस होगा कि हमें यंत्रों की आवश्यकता है, तब हम अवश्य उनको ग्रहण करेंगे। हमें उद्योग चाहिए; तो इसके लिए हमें उद्यमी बनना होगा। पहले हम स्वावलंबी बनें तो हमें दूसरों के नेतृत्व की उतनी आवश्यकता नहीं रहेगी। जब और जैसे हमें आवश्यकता होगी, हम यंत्रों को दाखिल करेंगे। एक बार हम अहिंसा के आधार पर अपना जीवन गढ़ लें तब फिर यंत्रों का नियंत्रण करना हम जान जायेंगे। ❑

स्त्री-शक्ति : कीर्ति श्री

❑ विनोबा

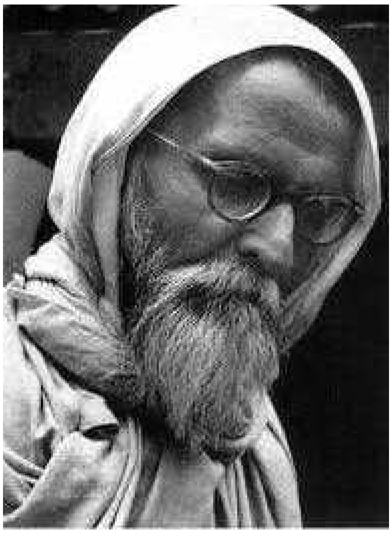

भगवद्गीता में सात शक्तियों का उल्लेख है—*कीर्तिः श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा।* वास्तव में ये समाज की शक्तियां हैं। ये ऐसी शक्तियां हैं, जिनसे समाज का और व्यक्ति का धारण-पोषण होता है। गीता के दसवें अध्याय में कोई सुव्यवस्थित बगीचा नहीं है, एक जंगल ही है। लेकिन इस वाक्य में व्यवस्था है। सात शक्तियों का चुनाव करके 'नारीणाम्'—नारियों में इन शक्तियों के रूप में मैं हूं, ऐसा भगवान ने अपना स्वरूप बताया। इसमें मैंने एक योजना देखी। इसलिए यह वाक्य मेरे चिन्तन में बहुत समय तक रहा।

1. कीर्ति–कृति की सुगंधि : कीर्ति को एक शक्ति के रूप में यहां रखा है। अच्छी कृति के परिणामस्वरूप दुनिया में जो सद्भावना पैदा होती है, उसे कीर्ति कहते हैं। कीर्तन-संकीर्तन शब्द भी उसी पर से बने हैं। कृति मूल है। कृति में कीर्ति अंतर्निहित है। अच्छी कृति के परिणामस्वरूप पूरे वातावरण में सुगंधि फैलती है, जो सबको खींचती है। सत्कृति के प्रति अनुराग पैदा करती है। यह अनुराग ही कीर्ति है। सत्कृतियों का निरंतर कीर्तन समाज-हृदय में चलता है।

2. कीर्ति से कृति-परंपरा, तद्द्वारा संस्कृति-निर्माण : अच्छी कृति जब की गयी, तब उसका जो फल मिलना था, वह तो उस समय समाज को मिल गया। लेकिन उसकी कीर्ति से भविष्य में भी कृति काम करती है। हमने अच्छी खेती की, अच्छी फसल आयी। अच्छी कृति का अच्छा फल मिल गया। लेकिन जब समाज में उसकी कीर्ति फैल जाती है तो फिर वह कृति इस प्रकार की अनेक कृतियों को प्रेरणा देती है। फिर उन कृतियों की भी कीर्ति फैलती है। इस तरह कीर्ति कृति की परंपरा चलाने वाली शक्ति मानी गयी है।

कृति से कृति-परंपरा जारी रहती है और उसमें से संस्कृति-निर्माण होती है। किसी एक ऋषि ने सर्वप्रथम मांसाहार-त्याग का प्रयोग किया। उसके बहुत अच्छे शारीरिक, मानसिक परिणाम निकले, तो उस कृति को कीर्ति ने फैलाया। तद्नुसार दूसरों ने भी प्रयोग किये। उनकी भी परंपरा चली। इस प्रकार समाज की संस्कृति बनती गयी।

3. स्त्रियों का यह विशेष कार्य : सत्कृतियों की परंपरा चलाने की और तद्द्वारा संस्कृति बनाने की जिम्मेदारी सारे मानव-समाज की है। लेकिन भगवान ने *नारीणां कीर्तिः* कह दिया, तो कृति की सुगंध फैलाने की जिम्मेदारी विशेष रूप से स्त्रियों पर आती है। सत्कृतियों को संगृहीत करके उसकी कीर्ति समाज में फैलाना, तद्द्वारा समाज में सद्भावना जाग्रत रखकर उसकी परंपरा जारी रखना और तत्परिणामस्वरूप संस्कृति बनाना—इतना कुल का कुल कार्य-विभाग विशेषतः स्त्रियों का माना गया है।

4. श्री = लक्ष्मी, कांति, शोभा : दूसरी शक्ति है, श्री। 'श्री' शब्द बहुत प्राचीन है। हम श्रीराम, श्रीकृष्ण कहते हैं। यह शब्द ऋग्वेद का है। अग्नि का वर्णन करते हुए उसकी श्री का वर्णन किया है, *स दर्शतश्रीः* — जिसकी कांति दर्शनीय है वह अग्नि। *अतिथिर् गृहे गृहे*—वह घर-घर में अतिथि है। वह रसोई करता है। यहां उत्पादन की शक्ति के रूप में श्री को देखा है। फिर उसका अर्थ लक्ष्मी भी है, क्योंकि लक्ष्मी श्रम से पैदा होती है। श्रम-शक्ति ही श्री है। जहां मनुष्य श्रम नहीं करता, वहां किसी प्रकार की कांति, शोभा या लक्ष्मी नहीं हो सकती। तो, श्री शब्द का मुख्य अर्थ है—लक्ष्मी, कांति, शोभा। कांति शब्द बुद्धि की प्रभा दिखाता है, लक्ष्मी उत्पादन और शोभा शब्द औचित्य दिखाता है। जिस जगह जो करना उचित है, वह वहां की शोभा है। मैला अगर रास्ते में पड़ा है, तो वह अशुभ है। खेत में, गड्ढे में पड़ा है, उस पर मिट्टी है तो वह शुभ है, उचित है। हस्त शब्द दुनिया में हास्य प्रकट करता है यानी शोभा प्रकट करता है। जब मनुष्य हाथों से काम करता है, तब दुनिया में हास्य प्रकट होता है। श्री कांति, शोभा, पावित्र्य आदि सबका आश्रयस्थान है।

5. शोभा यानी स्वच्छता : स्वच्छता के बिना शोभा नहीं। घर साफ करना, आसपास का आंगन साफ रखना इत्यादि स्वच्छता का काम स्त्री करती है। इसलिए तो कहा है, *न गृहं गृहमित्याहुः गृहिणी गृहमुच्यते*—घर को घर नहीं कहते, गृहिणी को ही घर कहते हैं। वह गृहाभिमानी देवता है। गृह की शोभा गृहिणी कायम रखती है और बढ़ाती है। समाज का और घर का, कुल-का-कुल स्वच्छता का विभाग श्री में आता है।

6. कांति यानी प्रचार-शक्ति तथा औचित्य : कांति यानी प्रचार-शक्ति। सूर्य में सिर्फ आभा होती और प्रभा नहीं होती, तो उसका प्रचार नहीं होता। सुबह सूर्य उगता है वह आभा और थोड़े समय के बाद जब चारों ओर उसकी किरणें फैलती हैं, वह प्रभा। वह श्री है। अंदर तेजस्विता हो और बाहर वह फैली हो, उसका है कांति।

इन दिनों मैं इंदौर की दीवारों पर लगे अश्लील चित्रों को हटाने की बात करता हूं।

उन चित्रों में श्री और औचित्य नहीं है। *दर्शतश्रीः*—जिसका दर्शन मंगल है, ऐसा वह नहीं है। ऐसा औचित्य-विचार हमें हर जगह करना चाहिए। उसके लिए कुछ ज्ञान की जरूरत भी होती है। तो, श्री अनेकविध सावधानियों का परिणाम है। कर्मक्षेत्र में, जीवन के व्यवहार में, चिन्तन में सावधानी रखते हैं तो श्री होती है। किस वक्त क्या बोलना, इसमें भी औचित्य है। औचित्य श्री है।

7. श्रीमान् ऊर्जित : इस तरह श्री एक परम व्यापक शब्द है, जो गीता में शक्ति के रूप में आया है। विभूति का वर्णन करते हुए भगवान ने कहा है, *यद् यद् विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।* श्रीमान् और ऊर्जित ऐसी दो विभूतियां दुनिया में होती हैं। जैसे भगवान विष्णु श्री हैं और भगवान शंकर ऊर्जित हैं। जैसे जनक महाराज श्री हैं और शुकदेव ऊर्जित हैं। बाहर जो प्रभा चमकती है, वह श्री है और ऊर्जित यानी आंतरिक बल। वह गुप्त रहता है। सार यह कि हमारी श्री कम न हो, शोभा कम न पड़े, हम हतश्री न हों, यह जिम्मेदारी समाज पर है और शायद स्त्रियों पर विशेषरूप से है, ऐसा भगवान सूचित करना चाहते हैं। ऐसे देखा जाये तो इस श्लोक में नारी यानी केवल स्त्री नहीं है। मानव की जो शक्ति है, उसे नारी कहा गया है। इसलिए यह सारे समाज पर लागू होता है। ❑

''आजादी का अर्थ हिन्दुस्तान के आम लोगों की आजादी होना चाहिए, उन पर आज हुकूमत करने वालों की आजादी नहीं। हाकिम आज जिन्हें अपने पांवतले रौंद रहे हैं, आजाद हिन्दुस्तान में उन्हीं लोगों की मेहरबानी पर हाकिमों को रहना होगा। उनको लोगों के सेवक बनना होगा और उनकी मरजी के मुताबिक काम करना होगा।'' –गांधी

विरासत

सारी संपत्ति अमानत है

❑ **गणेश गद्रे**

''गांधीजी का अमानत का सिद्धांत दीन और दुर्बल 'दरिद्रनारायण' को शक्तिशाली नरसिंह में बदल सकता है, जो मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण की सभी कूट व्यवस्थाओं को चीर-फाड़ डालेगा।''

हम अपनी बात पंचतंत्र की चार बुद्धिमानों की कहानी से आरंभ कर सकते हैं। उनमें से एक दुनियादारी में कुशल और बाकी तीन वैसे ही थे। वे रुपया कमाने के लिए घर से निकले थे और एक जंगल में से गुजर रहे थे। जंगल में उन्हें एक जगह कुछ हड्डियां बिखरी मिलीं। पहले बुद्धिमान ने एक मंत्र पढ़ा। और लो हड्डियां सिमटकर ढांचा बन गयीं। किसी एक बड़े जानवर का ढांचा दिखने लगा था। अब दूसरे बुद्धिमान ने अपनी मंत्र-शक्ति से उस ढांचे पर मांस और त्वचा चढ़ा दी। अब तो ढांचा आकार में बदल गया—एक शेर ने अपना पूरा आकार ले लिया था। तीसरे बुद्धिमान ने मंत्र पढ़कर उस शरीर में प्राण फूंक दिये। उस शेर में जैसे ही जीवन का संचार हुआ, वह उन तीनों बुद्धिमानों को निगल गया। दुनियादारी में कुशल चौथा विद्वान न जाने कब बगल के पेड़ पर चढ़ गया था, इसलिए वह इन सत्य के प्रयोगों से बच गया था!

अमानदारी का मंत्र गांधीवाद के ढांचे में नये सिरे से प्राण फूंक सकता है और यदि यह पुनर्जीवित हो गया तो हमें, हमारी आरामकुर्सियों सहित निगल जायेगा।

मुझे यकीन है कि हम सब उन तीन बुद्धिमानों की परंपरा के हैं, और सत्य के अनुसरण में आत्मरक्षा की जगह आत्म-बलिदान पसंद करेंगे। हम इस साहसिक कार्य में देश के बुद्धिजीवी, सुप्रतिष्ठित व्यक्तियों के साहचर्य की आशा कर सकते हैं। टाटा अमानतदारी पर अपनी दृष्टि से परीक्षण कर रहे हैं। इसी तरह श्री घनश्यामदास बिड़ला ने सिद्धांततः अमानतदारी के दायित्वों को स्वीकार कर लिया था और 1929 में शोलापुर में व्यापारियों के एक सम्मेलन में कहा था, ''यदि वह स्थिति आती है, तो हमें सबकी भलाई के लिए आत्म-बलिदान के लिए तैयार रहना चाहिए।''

गांधीवाद मांसाहारी न होने के कारण हमारे शरीरों को तो शायद न खाये, पर वह निश्चय ही हमें हमारे सभी अनुचित विशेषाधिकारों से जरूर वंचित कर देगा। स्वाधीनता की भोर में गांधीजी ने कहा था, ''...भारत को यदि स्वाधीनता का आदर्श जीवन जीना है, जो संसार के लिए ईर्ष्या की चीज होगी, तो भंगी, डॉक्टर, वकील, अध्यापक, व्यापारी और अन्य सभी को ईमानदारी से किये गये दिन-भर के काम की एक-सी मजदूरी मिलनी चाहिए।''

यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि **महात्मा गांधी चेयरमैन माओ से अधिक आमूल क्रांतिकारी थे। गांधीवाद बंदूक की नली का सहारा लिए बिना, लिंकन के स्वतंत्रता-प्रेम को लेनिन के समानता के आग्रह से जोड़ने की कोशिश करता है। इसलिए हमें एक ऐसा समाज स्थापित करने के लिए जो स्वतंत्रता और समानता दोनों को अंगीकार करे, एक प्रभावशाली अहिंसात्मक रणनीति अपनानी होगी। यदि हम सफल हो जाते हैं, तो हमारा देश विश्व को परमाणु अस्त्रों के सर्वनाश से बचा सकता है और मानव जाति की और भी उच्च तथा महान सत्यों की खोज में सहायता कर सकता है। यही तो मानवजीवन का वास्तविक उद्देश्य है।**

गांधीजी का तरीका यह था कि वे

समाज की बीमारियों के लिए ऐसी कुनैन की व्यवस्था करते थे जिस पर चीनी की परत चढ़ी होती थी। कटु से कटु सत्यों को वे अहिंसा की मोटी परत में लपेट कर देते थे। पर उनके कुछ अनुयायियों ने ऊपर की चीनी को चाट लेने और कुनैन को थूक देने का तरीका निकाल लिया। अमानत के सिद्धांत के साथ भी इन लोगों ने यही किया। आध्यात्मिक और नैतिक परतों की वे स्तुति करते नहीं थकते, पर जब भीतर के कड़वे भाग का सवाल आता है तो मौजूदा समाज-व्यवस्था को बदलने और अमानत के सिद्धांत से उसका तालमेल बैठाने का कोई तरीका सुझाए बिना ही चल देते हैं। वे यह भूल जाते हैं कि कोरी कथनी कभी भी करनी की जगह नहीं ले सकती। वैयक्तिक नैतिकता आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं को सुलझा नहीं सकती। व्यापारियों को केवल अंतर्विवेक से काम करने का आह्वान देकर, उनकी अनुत्तरदायी ढंग से काम करने की शक्ति पर अंकुश नहीं रखा जा सकेगा। ''दुरुपयोग की स्वतंत्र शक्ति को शक्ति से ही नियंत्रित करना आवश्यक है, अंतर्विवेक से नहीं।'' गांधीवाद का कोई भी विद्यार्थी अमानतदारी पर गांधीजी के कथनों को यदि धैर्य से एकत्रित करे, तो उसे वहां अमल में लाने के स्पष्ट और सशक्त आदेश मिल सकते हैं। गांधीजी का अमानत का सिद्धांत दीन और दुर्बल 'दरिद्रनारायण' को शक्तिशाली नरसिंह में बदल सकता है, जो मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण की सभी कूट व्यवस्थाओं को चीर-फाड़ डालेगा।

संपत्ति और मानव निष्पत्तियों के सभी रूप या तो प्रकृति की देन हैं, या सामाजिक जीवन की पैदावार। अतः उन पर व्यक्ति का नहीं, समाज का अधिकार है और उनका उपयोग सबकी भलाई के लिए होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी मानसिक और शारीरिक योग्यताएं और भौतिक संपत्ति समाज की अमानत समझनी चाहिए और उनका उपयोग उसकी भलाई के लिए करना चाहिए। यह रचनात्मक अमानतदारी ऐच्छिक नहीं, अनिवार्य है। और यह अमानतदारी संपत्ति को रखने का कोई स्थाई अधिकार भी नहीं है। यह अल्पकालिक स्थिति है, जो हमें बड़े पैमाने पर संपत्ति के सहकारीकरण पर ले जाती है। वैयक्तिक स्वामित्व के अमानती स्वामित्व का रूप लेने में मुआवजे का कोई दावा भी पैदा नहीं होता। अमानती स्वामित्व किसी को उत्तराधिकार में नहीं मिलता है। मूल अमानतदार की मृत्यु के बाद या उसके हटाए जाने पर वह समाप्त हो जाता है। अमानतदारों को मुनाफे का अधिकार नहीं होता है। कर्मचारियों की रजामंदी और राज्य की अनुमति से, वे अमानत के मामलों का प्रबंध करने का केवल पारिश्रमिक ले सकते हैं। इस पारिश्रमिक का कर्मचारियों के वेतन के साथ युक्ति-युक्त अनुपात होना चाहिए और वह उससे बहुत अधिक नहीं होना चाहिए। कर्मचारी अमानत की संपत्ति के प्रबंध में साझी बन जाते हैं। प्रबंधक, कर्मचारियों और समाज के प्रति उत्तरदायी होते हैं और उन्हें उनको हिसाब देना होता है। कर्मचारियों की श्रम-शक्ति, कुशलता और प्रतिभा का भी किसी के व्यक्तिगत अभ्युदय के लिए नहीं, बल्कि सारे समाज की भलाई के लिए उपयोग होता है।

अमानत का सिद्धांत पूंजीपतियों को समाप्त करने की या उन्हें कंगाल बनाने की बात नहीं सोचता है। वह उन्हें अपने अनुभव और अपनी प्रतिभा को सबकी भलाई के लिए प्रयुक्त करने का असली अवसर देता है। 'समाज के मतैक्य का प्रतिनिधित्व करने वाले' पंचायत राज्य को अमानत के सिद्धांत को अमल में लाने के लिए प्रशासकीय या कानून बनाने के कार्य की अनुमति है। अमानत के सिद्धांत के पीछे चरम शक्ति यह है कि जो लोग अपने अनन्य स्वामित्व से चिपटे रहते हैं, उनके साथ अहिंसात्मक असहयोग किया जा सकता है।

गांधीजी पूंजीवाद और साम्यवाद में से किसी को चुनने की पश्चिम की दुविधा को अच्छी तरह समझ गये थे। उत्पादन के आधुनिक साधन यदि व्यक्ति के हाथों में रहते हैं, तो उनसे धन-संपत्ति और सत्ता संकेन्द्रित हो जाती है, अमीर ज्यादा अमीर और गरीब ज्यादा गरीब होने लगते हैं। दूसरी ओर, यदि उत्पादन के साधन मुख्य रूप से राज्य के हाथों में चले जाते हैं तो नौकरशाही का हौआ अपना सिर उठाने लगता है। गांधीजी ने इसलिए विकेन्द्रित और मोटे तौर पर स्वायत्त आर्थिक व्यवस्था की कल्पना की, जिसमें छोटी इकाइयां व्यक्तियों के हाथों में रहेंगी और बड़ी इकाइयां सहकारी समुदायों की मिल्कियत होंगी और उन्हीं के प्रबंध में चलेंगी।

फ्रांसिसी दार्शनिक ने कहा था कि सारी संपत्ति चोरी है। दूसरी ओर गांधीजी ने कहा कि सारी संपत्ति अमानत है। दोनों का आशय एक था। गांधीजी जब किसी से यह कहते थे कि वे चोरों की तरह काम कर रहे हैं। इस तरह उन्हें यह नोटिस दे दिया जाता था कि वे अपनी संपत्ति या अधिकारों को छोड़ें और उनमें उन लोगों को अपना साझी बनाएं जिनका वे शोषण करते रहे हैं या जिन पर आधिपत्य जमाते आये हैं। गांधीजी अमानतदारों को अपने ढंग सुधारने के लिए पूरा अवसर देते थे। परंतु यदि उनमें पश्चात्ताप का कोई लक्षण दिखाई नहीं देता था, तो उनके हृदय-परिवर्तन के लिए वे असहयोग और सत्याग्रह के हथियार निकालते थे। गांधीजी ने कहा था, ''यदि मालिकवर्ग अमानतदारी को स्वेच्छा से स्वीकार नहीं करता है, तो जनमत के दबाव से उसमें परिवर्तन आना चाहिए।'' शायद इसलिए जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि गांधीजी के परिवर्तन के तरीके विनम्र और विचारशील जबर्दस्ती से बहुत भिन्न नहीं थे।

ब्रिटिश अमानतदारों के साथ गांधीजी के व्यवहार के उदाहरण से यह चीज स्पष्ट हो जाती है। आरंभ में वे यह अपेक्षा रखते थे कि ब्रिटिश शासक भारतीय जनता के

अमानतदारों की तरह बर्ताव करेंगे। जब रौलट एक्ट और जलियांवाला बाग के नरसंहार के बाद ब्रिटिश इरादों के बारे में उनका भ्रम पूरी तरह टूट गया तो वे ब्रिटिश शासन के खिलाफ तब तक असहयोग की एक के बाद दूसरी लहर का नेतृत्व करते रहे, जब तक कि लार्ड माउंटबेटन वाइसराय की गद्दी से उतर कर गवर्नर-जनरल नहीं बन गये, जब तक कि स्वामी को सेवक बनने के लिए 'राजी' नहीं कर लिया गया।

भारतीय नरेशों के साथ भी यही हुआ। गांधीजी ने उनसे 1916 में बनारस के एक तूफानी जलसे में अमानतदारों की तरह बरताव करने की प्रार्थना की थी। जब नरेश ब्रिटिश प्रभुत्व के हट जाने के बाद भी अपनी संपत्ति और सत्ता छोड़ने को तैयार नहीं लगे, तो गांधीजी ने सरदार पटेल को सलाह दी कि वे जनमत का दबाव डालें और नरेशों को भारतीय संघ में शामिल होने और उसके साथ एक हो जाने के लिए 'राजी' करें। उनमें से बहुतों को राज्य प्रमुख के रूप में अपने लोगों की सेवा करने का अवसर दिया गया। उनकी स्थिति में आये परिवर्तन की कठिनाइयों पर काबू पाने के लिए उन सबको 'प्रिवीपर्स' या एक तरह का वैयक्तिक कोष दिया गया। यहां यह बताना भी जरूरी है कि अलग-अलग तरह के नरेशों के लिए इस वैयक्तिक कोष की अलग-अलग मात्रा निर्धारित करने में सरदार पटेल की उदारता गांधीजी को अच्छी नहीं लगी थी।

नरेशों को अपना दायित्व पूरा करने के लिए जिस शांत, प्रभावशाली और अपूर्व ढंग से राजी किया गया, उसका सबसे मुख प्रमाण ख्रुश्चेव की एक टिप्पणी में मिलता है। यह उन्होंने 1956 की अपनी भारत-यात्रा में की थी : "आप भारतीय भी विचित्र हैं। नरेशों को समाप्त किये बिना आप नरेशों की रियासतें किस तरह समाप्त कर सके?"

गांधीजी ने स्वाधीनता की भोर में ही लोगों की मनोवृत्ति भांप ली थी। इसलिए उन्होंने अमानतदारी के एक फार्मूले को स्वीकृति दे दी थी। उसमें कहा गया था :

1. अमानतदारी आज की पूंजीवादी समाज-व्यवस्था को सम-समाज-व्यवस्था में रूपांतरित करने का साधन प्रदान करती है। इसमें पूंजीवाद के लिए स्थान नहीं है, परंतु यह आज के मालिक वर्ग को सुधारने का अवसर देती है। यह इस विश्वास पर आधारित है कि मानव स्वभाव ला-इलाज कदापि नहीं है।
2. यह संपत्ति पर वैयक्तिक स्वामित्व के किसी अधिकार को स्वीकार नहीं करती, सिवाय उस स्थिति के जब समाज ने स्वयं अपने कल्याण के लिए उसकी अनुमति दी हो।
3. स्वामित्व और धन-संपत्ति के उपयोग का कानून से नियंत्रण इसमें वर्जित नहीं है।
4. इस प्रकार राज्य-नियंत्रित अमानतदारी में व्यक्ति अपनी धन-संपत्ति को अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए या समाज के हितों के प्रतिकूल रखने या प्रयुक्त करने को स्वतंत्र नहीं होगा।
5. जैसे कि समुचित न्यूनतम निर्वाह-योग्य मजदूरी निश्चित करने का सुझाव रखा गया है, ठीक उसी तरह समाज में किसी व्यक्ति को हो सकने वाली अधिकतम आय की भी एक सीमा निश्चित होनी चाहिए। इस तरह की न्यूनतम और अधिकतम आय के बीच का अंतर युक्ति-युक्त, न्यायसंगत और समय के साथ इस तरह बदलने वाला होना चाहिए कि उसका रुझान अंतर की समाप्ति की ओर हो।
6. गांधीवादी अर्थव्यवस्था में उत्पादन का स्वरूप सामाजिक आवश्यकता द्वारा निर्धारित होगा, वैयक्तिक सनक या लोभ द्वारा नहीं।

गांधीजी ने यह फार्मूला श्री घनश्यामदास बिड़ला के द्वारा भारतीय पूंजीपतियों के पास स्वीकृति के लिए भेजा था। श्री बिड़ला अमानत के सिद्धांत को 1929 में स्वीकार तो कर चुके थे। परंतु जब गांधीजी असल मामले पर आये तो वह फार्मूला तहखाने में डाल दिया गया। श्री बिड़ला की ओर से फिर कोई सूचना नहीं मिली। गांधीजी इस मामले को आगे बढ़ाते, इससे पहले ही उनकी हत्या हो गयी।

गांधीजी ने श्री बिड़ला के द्वारा भारतीय पूंजीपतियों को अपने विशेषाधिकार छोड़ने का जो नोटिस दिया था, उसे अब बीस साल से अधिक हो गये हैं। उनमें हृदय-परिवर्तन का कोई लक्षण दिखाई नहीं दिया है। इसके विपरीत वे विदेशी पूंजी की सहायता से लोगों का और गहरा शोषण करने के लिए, अपने को और भी सुविधाजनक मोर्चों पर मजबूती से जमा रहे हैं। इसलिए वह समय आ गया है जब अपने को गांधीवादी कहने वालों को इन दुराग्रही अमानतदारी को अपने दायित्व पूरा करने के लिए 'राजी' करने की बात सोचनी चाहिए।

अमानतदारी को अमल में लाने की दिशा में सबसे महत्त्वपूर्ण कदम ऐसा जन-आंदोलन है जो लोगों को अमानतदारी के दायित्वों की शिक्षा दे और बड़े-बड़े संस्थानों के सहकारीकरण की मांग के पीछे कर्मचारियों को संगठित करे। पुराने अनुभवी सर्वोदय-नेता श्री शंकरराव देव ने इस दिशा में कुछ काम शुरू किया था। एक पत्रक में उन्होंने यह सुझाया था कि चाय बागान उद्योग अमानतदारी को अमल में लाने के गहरे परीक्षणों के लिए आदर्श क्षेत्र है। चाय बागानों के ब्रिटिश मालिक 100 साल से भी ऊपर 100 प्रतिशत से अधिक सालाना मुनाफा कमा चुके हैं। बागान जांच आयोग की 1956 की रिपोर्ट इस चीज को उजागर करती है कि किस तरह ब्रिटिश पूंजी ने, भारतीय पूंजीपतियों के साथ साझेदारी करके, भारत पर अपनी आर्थिक जकड़ कायम रखी है। गांधीजी के भारत का यह पवित्र कर्तव्य है कि वह पुराने ब्रिटिश कामनवेल्थ को एक

सच्चे कामनवेल्थ, सबका धन में बदले। विभिन्न ट्रेड यूनियन संगठनों को, अधिक मजदूरी के लिए नहीं, बल्कि जिन संस्थानों में वे काम करते हैं, उनके स्वामित्व के लिए आंदोलन करने का आह्वान देना चाहिए। यदि मालिक अमानतदार बनने से इनकार करते हैं, तो कर्मचारियों को अहिंसात्मक सत्याग्रह शुरू करना चाहिए और मालिकों के लिए शोषण जारी रखना असंभव कर देना चाहिए। गांधीजी ने मालिकों को सलाह दी थी कि ''उन्हें स्वेच्छा से कर्मचारियों को संस्थानों का, जिन्हें वे अपनी रचना मानते हैं, असली मालिक समझना चाहिए...उन्हें हड़तालियों को तुरंत संस्थान का पूरा नियंत्रण सौंप देना चाहिए, क्योंकि वह जितना उनका है, उतना ही हड़तालियों का है।''

यदि किसी विशेष उद्योग या संस्थान के प्रबुद्ध और संगठित कर्मचारी साझेदारी के दायित्वों को संभालने को तैयार हैं और यदि वे अमानतदार बनने से इनकार करने वाले अपने मालिकों के साथ अहिंसात्मक असहयोग कर रहे हैं, तो विद्यमान अधिनियमों के अधीन, सरकार को सार्वजनिक हित के लिए इस तरह के संकटग्रस्त संस्थानों का प्रबंध अपने हाथ में लेने का अधिकार है। और यदि इस प्रशासकीय कार्यवाही को करने वाली सरकार सभी दलों का प्रतिनिधित्व करती है, तो बाद में वैयक्तिक स्वामित्व से अमानती स्वामित्व में परिवर्तन, गांधीजी द्वारा निर्धारित अहिंसा के मानदंडों के अनुरूप होगा।

अमानत का सिद्धांत इस प्रकार एक शक्तिशाली मंत्र है जो गांधीवाद के कंकाल में प्राण फूंक सकता है। गांधीजी ने बहुमुखी रचनात्मक गतिविधियां शुरू की थीं। वे सब गांधीवाद के अंग-प्रत्यंग हैं, परंतु अमानत का सिद्धांत तो उसका जीवन-श्वास ही है। जाति-प्रथा को मिटाना, उद्योगों का विकेन्द्रीकरण, पर्दे को खत्म करना, नारी उद्धार, बुनियादी शिक्षा, अंग्रेजी हटाना, धर्मों या संप्रदायों में मेलजोल, राष्ट्रीय एकीकरण, शांति, भूदान और ग्रामदान—सभी अति मूल्यवान आंदोलन हैं। परंतु यदि उन्हें अमानत के सिद्धांत को अर्थव्यवस्था के शहरी क्षेत्र में अमल में लाने के कार्यक्रम से नहीं जोड़ा गया, तो वे व्यर्थ और निराशाजनक ही सिद्ध होंगे।

गांधीजी ने 1931 के कराची प्रस्ताव का आशय समझाते हुए कहा था कि समाज के सभी सेवकों की, वे चाहे वकील हों या व्यापारी, अधिकतम मासिक आय 500 रुपये होगी। ''आप यह न सोचें कि यह सुझाव केवल कागज पर लिखा रहने के लिए है। स्वराज्य जब प्राप्त हो जायेगा तो इसे लागू किया जायेगा। मैं बूढ़ा हूं और यदि मर भी जाता हूं, तो जवाहरलाल निश्चय ही इसे लागू करेगा।''

14-15 अगस्त, 1947 की अर्धरात्रि को जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, ''बहुत साल पहले हमने नियति से साक्षात्कार की प्रतिज्ञा की थी, और अब वह समय आ रहा है जब हम अपनी प्रतिज्ञा पूरी करेंगे।'' स्वतंत्रता के 22 साल बाद भी वह प्रतिज्ञा वास्तविक अर्थ में अभी पूरी नहीं हुई है, क्योंकि हम धन की पागल दौड़ में फंस गये हैं, क्योंकि हम दुनियादारी की—नरसिंह के भय से पेड़ पर चढ़ जाने की प्रवृत्ति रखते हैं।

(अप्रैल, 1970 में लिखे गये लेख के संपादित अंश) ❑

> **''व्यक्तिगत तौर पर तो मैं यह चाहूंगा कि राज्य के हाथों में शक्ति का ज्यादा केंद्रीकरण न हो, उसके बजाय ट्रस्टीशिप की भावना का विस्तार हो। क्योंकि मेरी राय में राज्य की हिंसा की तुलना में वैयक्तिक मालिकी की हिंसा कम हानिकर है। लेकिन यदि राज्य की मालिकी अनिवार्य ही हो, तो मैं राज्य की कम-से-कम मालिकी की सिफारिश करूंगा।'' –गांधी**

देश के नये कर्णधार या तस्कर!

❑ **अनिल भाटिया**

तत् करोति इति तस्करः। काम इतना बुरा कि उसका नाम भी नहीं लिया जा सकता। इसलिए बस कहा कि 'उस' काम को जो करता है, वह तस्कर। आज उदार बताई गई अर्थनीति में भी ऐसे कई काम हैं, जिनका नाम लेना भी अच्छा नहीं लगता। पर ऐसे ही तो नाम हैं आज जो चमक-धमक की राजनीति में ऊपर आये हैं। इन नामों से, इन कामों से हमारा वर्तमान जुड़ा है और भविष्य भी। इसके खतरे को समझा रहे हैं उसी दुनिया से जुड़े श्री अनिल भाटिया। स्टेंडर्ड चार्टर्ड बैंक, मास्टर कार्ड, अमेरिकन एक्सप्रेस जैसी बड़ी कंपनियों में काम कर चुके श्री अनिल भाटिया व्यापार और वाणिज्य की दुनिया में बहुत ही कम उमर में शीर्ष पर पहुंच गये थे। उस अर्थ जगत की निरर्थकता देख कर वे उतनी ही जल्दी उससे उतर भी गये। आजकल वे देशभर में घूमते हैं, बच्चों को अच्छा नाटक सिखाते हैं और संवादहीनता के इस दौर में उनसे अच्छी बातचीत करवाते हैं। उनका यह आलेख सन् 2012 की स्थिति की समझ पर आधारित है, जो आज की स्थिति में भी उसी रूप में लागू है। सिर्फ कर्णधार बदल गये हैं। –सं.

अभी कुछ समय पहले ही हमारे प्रधानमंत्री और नागरिक उड्डयन मंत्री ने लगभग डूब-सी रही एक निजी हवाई कंपनी

को वित्तीय मदद देकर तारने की बात की थी। उसी समय सरकार की भर्त्सना हो रही थी, गरीबी की रेखा को 32 रुपये पर रखने के प्रस्ताव के लिए। विडंबना बहुत क्रूर थी। दिहाड़ी में 33 रुपये कमाने वालों को हमारी सरकार अमीर मान रही थी। परंतु करोड़ों में खेलने वाले इस कंपनी के मालिक को सरकार दीनहीन बताकर सरकार की सहायता का पात्र बता रही थी। जो हवाई जहाजों की कंपनी चलाते हैं, क्रिकेट और कारदौड़ की महंगी टीमें पालते हैं, महलों जैसे कई घर रखते हैं, और आये दिन अपनी अय्याशी की वजह से खबरों में रहते हैं, उन्हें सरकार बचाना चाह रही है। (''यह आज की सरकार पर भी समाज रूप में या अधिक ही लागू है।''—सं.)

गरीब के लिए हमारी सरकार धनतांत्रिक है और अमीर के लिए समाजवादी। कई लोगों ने सरकार के इस फैसले पर सवाल उठाये। क्या जरूरत है सरकार को ऐसे खाऊ-उड़ाऊ अरबपति के डगमगाते व्यापार को संभालने की? वह भी सार्वजनिक धन से?

इस तरह की आलोचना करने वाले नीति और मर्यादा की दलीलें देते हैं। उन्हें लगता है ऐसी किसी लड़खड़ाती कंपनी की मदद करने का अर्थ यही है कि सरकार कंपनी के डगमगाते मालिक की मदद कर रही है। लेकिन व्यापार की यह नई दुनिया ऐसे नहीं चलती।

मान लीजिए सरकार इस कंपनी को वित्तीय सहायता देकर डूबने से बचा लेती है। परंतु इस बाजार पर शोध करने वाले कई महीनों से कह रहे हैं कि ये कंपनी दिवालिया है, इसमें अपने पांव पर खड़े रहने की कूवत ही नहीं है या कहें कि अपने पंखों पर उड़ते रहने की ताकत नहीं है। अगर कंपनी दिवालिया करार दी जाती है तो कंपनी में अपना सारा निवेश खो बैठेंगे इसके मालिक जो हमारी संसद में राज्यसभा के सदस्य भी हैं।

आज कंपनी की कीमत 1,250 करोड़ रुपये आंकी जाती है। इसमें मालिक का हिस्सा है 58 प्रतिशत। अगर इसे बंद कर दिया जाये तो हमारे माननीय सांसद कोई 730 करोड़ रुपये का निवेश गवां देंगे। पर नुकसान अकेले उन्हीं का नहीं होगा। कई और हैं, जिनका बंटाधार होगा।

पहला नंबर आयेगा वाणिज्यिक बैंकों का। और इनमें सबसे आगे होगा हमारा भारतीय स्टेट बैंक, जिसने कुछ समय पहले ही घनघोर बेवकूफी में इस कंपनी से बकाया कर्ज को माफ कर उसे कंपनी में 23 प्रतिशत समान हिस्से में परिवर्तित कर लिया था। इसका मतलब यह हुआ कि भारतीय स्टेट बैंक अपने 291 करोड़ रुपये खो देगा कंपनी के बंद होने पर।

दूसरे स्थान पर होंगे, एक बार फिर वे वाणिज्यिक बैंक, जिनमें एक बार फिर सबसे आगे होगा भारतीय स्टेट बैंक। क्योंकि इस हवाई कंपनी के खाते इन्हीं बैंकों में हैं। आखिरी गिनती के समय कंपनी पर कोई 7 हजार करोड़ के कर्जे बकाया थे। ये कर्जे हर दिन, हर क्षण बढ़ रहे हैं। क्योंकि ब्याज दिन-ब-दिन बढ़ रहा है। कंपनी को दिवालिया घोषित कर और उसके कर्जों को खत्म करने की नौबत आते-आते यह कर्जा 8 हजार करोड़ रुपये हो जायेगा। पर दिवालिया घोषित होने के बाद कुर्क करने के लिए बैंकों को कोई भी संपत्ति नहीं मिलेगी। कारण? इस कंपनी ने हवाई जहाज खरीदे ही नहीं, उन्हें तो उसने केवल किराये पर लिया है। किराया चुकाया कि नहीं—यह भी एक अलग सिरदर्द होगा भारतीय स्टेट बैंक के लिए।

तीसरे स्थान पर आयेंगी सरकारी तेल कंपनियां जैसे इंडियन आयल, भारत पैट्रोलियम और हिन्दुस्तान पैट्रोलियम, जो इस कंपनी को हवाई ईंधन बेचती हैं। व्यापार में उधार पर खरीदना और देर से लागत चुकाना तो चलता ही रहता है। पर इस मामले में यह उधारी छोटी-मोटी नहीं है। यह 1 हजार करोड़ रुपये के इर्द-गिर्द है। तेल में आग बहुत जल्दी लग सकती है।

चौथे स्थान पर है भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण और उसके साझेदार जैसे मुंबई और दिल्ली के अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे। ऐसा माना जाता है कि इस कंपनी को इन हवाई अड्डों पर अपने जहाज उतारने, खड़े करने, सवारियां चढ़ाने-उतारने और जहाज उड़ाने की सुविधाओं, सेवाओं के लिए जो पैसा देना था, वह सब बकाया है। कोई 250 करोड़ रुपया उधार है।

पांचवें पर है आयकर और कर्मचारी भविष्य निधि का 422 करोड़ रुपया। कंपनी ने अपने कर्मचारियों की तनख्वाह में से यह सब पहले ही काट लिया—पर फिर सरकार को नहीं दिया या भविष्य निधि में जमा नहीं किया।

छठा स्थान है कंपनी के ग्राहकों का। ज्यादातर लोग टिकट कुछ दिन या हफ्ते पहले पेशगी ले लेते हैं। अगर अनुमान के लिए केवल एक तिहाई ग्राहकों को ही लें तो यह पेशगी की रकम कुछ 2 हजार करोड़ रुपये की मानी जा रही है।

सातवें और आखिरी नंबर पर आते हैं इस जहाज कंपनी के कोई 7 हजार अभागे कर्मचारी। दिवालिया पिटने पर इन सबको आखिरी महीने की आमदनी छोड़नी पड़ेगी। कोई 60 करोड़ रुपये। और इसमें सेवोपहार यानी ग्रेच्युटी, छोटे-मोटे भत्ते और छुट्टी छोड़ने का भुगतान अलग है। इस सबके अलावा उन्हें ऐसे प्रतिष्ठित रोजगार छूटने के कष्ट होंगे सो अलग।

कंपनी के मालिक की मिल्कियत में एक आईपीएल क्रिकेट टीम भी है। तो इस सारे गड्ड-मड्ड को हम एक खेल की तरह भी देख सकते हैं, एक तरफ तो ये मालिक हैं और दूसरी तरफ है शेष भारत। लेकिन ये खेल जरा अजीब है। क्योंकि अगर मालिक इसमें 600 करोड़ रुपये हारेंगे तो हम सब मिलकर कोई 11 हजार करोड़ रुपये खो बैठेंगे। यानी उनके हर एक रुपये के नुकसान पर हमारे 15 रुपये मिट जायेंगे। हमें नहीं पता कि उनके और सरकार के बीच क्या बातचीत

चल रही है। पर यह तो हो ही सकता है कि वे सरकार से कह रहे होंगे : ''आप मेरी एयरलाइन कंपनी को डुबोना चाहें तो डुबो दीजिए। पर मैं जितना गहरा धंसूंगा, उससे 15 गुना गहरे आप खुद जा धंसेंगे।''

वित्त और वाणिज्य की दुनिया में कहा जाता है कि अगर बैंक का आप पर ऋण 10 हजार रुपये है तो ये आपकी समस्या है। पर ऋण अगर 10 हजार करोड़ का है तो फिर यह समस्या खुद बैंक की है। उद्योगपति और व्यापारी इसे अच्छी तरह से जानते हैं। अपने एक रुपये का निवेश दिखाकर आसान किश्तों पर पांच रुपये का ऋण कैसे लिया जाता है, ये उन्हें बखूबी आता है। या 10 रुपये का। या एक रुपये पर 15 रुपये का जैसा कि इस जहाज की कंपनी ने दिखा दिया है!

यह किस्सा हमें हमारी वित्तीय प्रणाली के बारे में बहुत कुछ बताता है। पर रुपये-पैसे की दुनिया में सबसे ज्यादा सृजनशीलता तो उन परियोजनाओं में दिखती है जिन्हें 'आधारभूत' कहा जाता है। यह एक नया शब्द है और अंग्रेजी के भी एक नये शब्द 'इंफ्रास्ट्रक्चर' का जबरन अनुवाद है। जैसे बिना मतलब के ये शब्द हैं, वैसे ही बिना उत्पादन या परिश्रम के इस दुनिया में अनाप-शनाप मुनाफे हैं।

यह दुनिया उधार के रुपये पर ही चलती है। कर्ज और व्यापार का संबंध बहुत पुराना और गहरा है। कर्जदार जब तक ब्याज समय पर देता रहे और निश्चित समय पर मूलधन भी चुका दे तो ये रिवाज बहुत ठीक से काम करता है। पर इसका दुरुपयोग करने वाले भी होते हैं, जो एक उधार से दूसरा उधार चुकाते हैं, दूसरे से तीसरा और तीसरे से चौथा। इस तरह ये गाड़ी चलती रहती है और बनाने वालों का मुनाफा भी बनता रहता है। लेकिन तब तक ही जब तक दो लेनदार एक साथ दरवाजे न पहुंच जायें!

इसी तरह से 'आधारभूत' परियोजनाओं (घपले कहना बेहतर रहेगा) में मुनाफा कमाने का एक तरीका आजकल हमारे यहां बहुत चल निकला है। निरंतर उधारी से मुनाफाखोरी का ये नुस्खा समझने के लिए हमें व्यापार और वाणिज्य की दुनिया से होकर गुजरना होगा।

चूंकि नाम लेना ठीक नहीं है तो मान लेते हैं कि आप, हमारे पाठक ही इस परियोजना के कर्णधार हैं! फर्ज कीजिए कि आप हमारे देश के किसी तेजी से बढ़ते शहर में अपना एक छोटा-मोटा पारिवारिक व्यापार चलाते हैं। आपके यहां से चुनकर मंत्री बने एक नेता से आपके संबंध भी हैं। आपके प्रिय मंत्रीजी सरकार में कुछ अधिकारियों के साथ मिलकर, एक बहुत बड़ी परियोजना का प्रस्ताव रखते हैं। आखिर बिजली के बिना आजकल कोई भी तरक्की और राष्ट्र-निर्माण की कल्पना ही नहीं कर पाता। इसलिए मान लीजिए कि ये परियोजना बिजली उत्पादन के लिए है और 2 हजार करोड़ रुपये की लागत लिये है।

आप अपने कुनबे को साथ बैठा कर सलाह करते हैं। सब कुछ मिलाकर आपके पास 100 करोड़ रुपये इकट्ठे हो सकते हैं। घर के एक बुजुर्ग जो आपकी नजर में सठिया चुके हैं, आप पर हंसते हैं, फिकरा कसते हैं जवान लोगों पर, जो अपनी औकात से बीस गुणा बड़ी परियोजना हाथ में लेना चाहते हैं। आप उनके लिए मथुरा-काशी-हरिद्वार की तीर्थ यात्रा का टिकट खरीद देते हैं। इसके बाद वे केवल आपके पारिवारिक समाज सेवा ट्रस्ट का काम ही देखेंगे, व्यापार का नहीं। समाज सुधार का काम-काज अब उन्हीं के जिम्मे होगा, और उनकी जरूरत आपको केवल तब होगी जब आपको किसानों से जमीन खरीदनी होगी और कुछ सामाजिक कार्यकर्ता आपके खिलाफ प्रदर्शन की तैयारी में होंगे।

अब चूंकि परियोजना राष्ट्रीय महत्त्व की है और 'आधारगत' ढांचा बनाने की बहुत बड़ी कोशिश है, तो सरकार ऐसी परियोजनाओं को बढ़ावा देती है। सरकार वायदा करती है कि न केवल वह आपसे सारी की सारी बिजली खरीद लेगी बल्कि आपको कम से कम 12 प्रतिशत का मुनाफा भी देगी। इस वायदे का फायदा यह होता है कि बैंक आपको बहुत आसानी से कर्जा देने को तैयार हो जायेंगे। जो बैंक कल तक आपके एक रुपये के निवेश पर बस दो रुपये का कर्ज ही देता था, वह अब तीन रुपये देने को राजी हो जायेगा। इसका मतलब यह हुआ कि 2 हजार करोड़ की परियोजना के लिए आपको केवल 500 करोड़ रुपये का इंतजाम करना है—बाकी 1500 करोड़ रुपये बैंक कर्जे में देगा।

अब 500 करोड़ की कंपनी बनाने के लिए आपको केवल 250 करोड़ रुपये ही चाहिए क्योंकि उससे कंपनी पर आपकी 50 प्रतिशत भागीदारी बनी रहेगी। बचे 250 करोड़ रुपये का हिस्सा हजारों, लाखों निवेशकों को शेयर बाजार में बेचा जायेगा।

फिर भी, आपके पास केवल 100 करोड़ रुपये हैं और आपको चाहिए 250 करोड़। बाकी 150 करोड़ रुपये कहां से लाइयेगा? ऐसे समय के लिए ही होते हैं महाजनी निवेशक, जिन्हें अंग्रेजी में 'इंवेस्टमेंट बैंक' कहा जाता है। इनका काम होता है व्यापार के लिए बाजार से पूंजी लेना कर्जे पर। ये बैंकर आपसे एक नई कंपनी बनवायेंगे, जिसमें आप और आपके परिवार के 100 करोड़ रुपये लगे हुए होंगे। ये कंपनी आपकी परियोजना के दम पर शेयर बाजार में एक सार्वजनिक प्रस्ताव रखते हैं जिसे अंग्रेजी में 'आईपीओ' कहते हैं। ये 30 रुपये के नफे पर बेचा जाता है।

इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आपकी परियोजना अभी कागज पर ही है और आपके पास बिजली बनाने के लिए न तो मशीनें हैं और न जमीन ही। महाजनी निवेशक के पास एक पूरी जनसंपर्क सेना है जो अखबार और टीवी के माध्यम से लोगों को बतायेगी कि यह परियोजना और इसको चलाने वाले कैसे राष्ट्र-निर्माण में अमूल्य भूमिका निभा रहे हैं और कैसे आपकी कंपनी में काम करने वाले

न केवल भारी मुनाफे के भागीदार होंगे बल्कि मुनाफा कमाते हुए राष्ट्र के सच्चे सपूत कहलायेंगे। शेयर बाजार में जो दलाल आपके पुराने साथी हैं वे ऐसी बात चलाना शुरू करेंगे कि काले बाजार में इस शेयर का दाम बहुत ऊपर जायेगा।

ऐसे काबिल साथियों की मदद से आपकी कंपनी का एक शेयर बाजार में 40 रुपये पर खुलता है, जिसमें 10 रुपये उसकी कीमत है और 30 रुपये का प्रीमियम (नफा) उसमें जुड़ा हुआ है। आपके प्रस्ताव को खरीदने वालों की होड़ लगी हुई है और जितने शेयर हैं, उससे कहीं ज्यादा का पैसा आपके पास आ गया है। तो अब आपकी कंपनी का मोल 500 करोड़ रुपये हो गया है। इसमें 200 करोड़ तो पूंजी है और 300 करोड़ उस पूंजी की शेयर बाजार में अतिरिक्त कीमत।

500 करोड़ रुपये के आदमी को कोई भी बड़ा बैंक 1500 करोड़ रुपये का कर्ज देगा। बैंक का लक्ष्य भी कर्जा बांटना है और आप तो इस लक्ष्य को पूरा करने में बैंक की मदद ही कर रहे हैं। आप उन मंत्रीजी को नहीं भूल सकते, जिनकी नेक नजर से आपकी परियोजना उभरी थी। मंत्रीजी का साझा सरकार में काफी दबदबा है क्योंकि उनके साथ तीन विधानसभा सदस्य हैं, जिनके बिना अल्पमत राज्य सरकार चल नहीं पायेगी। कंपनी में आपकी जो 50 प्रतिशत की भागीदारी है, उसमें से 10 प्रतिशत आप उन्हें दे देते हैं। पर सीधे नहीं दे सकते तो उनके दो मित्रों के मार्फत देते हैं। उनमें एक जमीन की सौदेबाजी किया करते थे और अब वे एक बड़ी भू-विकास कंपनी चलाते हैं। दूसरे पहले कभी टेंट हाउस चलाते थे और वे भी अब 'भू-संपत्ति' की खदीद-फरोख्त करते हैं! या क्या पता चांद-सूरज नाम का कोई टी. वी. चैनल चलाते हों।

अब जेब में 2 हजार करोड़ लेकर आप दुनिया घूमने निकलते हैं, बिजली बनाने वाली मशीनें खरीदने जैसे टरबाइन। आप यूरोप जाते हैं, अमेरिका जाते हैं, चीन जाते हैं सारा भ्रमण कर आप एक हजार करोड़ की नई से नई मशीनें खरीदना तय करते हैं। यहां पर आपके महाजनी निवेशक आपसे एक और कंपनी बनवाते हैं मॉरिशियस, दुबई या सिंगापुर जैसी किसी कर-मुक्त जगह पर। यह कंपनी एक हजार करोड़ खर्च कर मशीनें खरीदती है और फिर 1500 करोड़ रुपये में आपकी ही भारतीय कंपनी को बेच देती है!

आपके 100 करोड़ रुपये के निवेश पर आपके पास 500 करोड़ का मुनाफा तो हो ही चुका हे। और ये पूंजी किसी कर-मुक्त देश में है, पर इस बारे में बात बाद में होगी।

आपकी भारतीय कंपनी के पास जो 500 करोड़ रुपये बचे हैं, उससे अब आप किसी अनुसूचित जनजाति के इलाके में जमीन खरीदेंगे। वहां रहने वाले आदिवासी कहे जाते हैं इसलिए आप उनके इलाके में विकास लायेंगे। अगर जमीन खरीदने की जोर-जबरदस्ती का हल्ला हो गया तो आपके परिवार की सामाजिक संस्था वहां एक घटिया स्कूल और एक सस्ता-सा अस्पताल बना देगी। सरकारी स्कूल ओर अस्पताल तो चलते ही नहीं हैं इसलिए अपके सामाजिक योगदान का बोलबाला हो जायेगा। आप आदिवासियों के हितैशी। आपकी परियोजना के लिए जमीन तो औने-पौने दाम पर मिल ही जायेगी।

दो साल में आपका बिजलीघर बनकर खड़ा हो जायेगा। सरकार ने आपके 2 हजार करोड़ के निवेश पर 12 प्रतिशत मुनाफे की गारंटी दी है। तो आपकी सारी बिजली सरकार खरीदेगी और आपको कम से कम 240 करोड़ की आमदनी हर साल होगी। बैंक के कर्ज पर 150 करोड़ का ब्याज आप आसानी से लौटा देंगे और 90 करोड़ रुपये का शुद्ध मुनाफा आपका ही होगा। यह मत भूलिए कि आपके निवेश की असली कीमत केवल 200 करोड़ रुपये है।

आपके हर 10 रुपये के शयर पर 4.5 रुपये का नफा होगा। इससे उस शेयर का दाम बाजार में 50-75 रुपये होगा, जो आपके शेयर बाजार के निवेशकों को प्रसन्नचित रखेगा।

एक दिक्कत आयेगी। उस शेयर से आये आपके 500 करोड़ रुपये का आधा ही बचेगा। आखिर मंत्रीजी, महाजनी निवेशक, सरकारी बाबू, पत्रकार, जनसंपर्क अधिकारी और सामाजिक संस्थाओं का भी आपको ध्यान रखना होगा। उसमें रुपये खर्च होते हैं। फिर भी आपके पास 2 हजार करोड़ की एक कंपनी है और 250 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा कर-मुक्त मॉरिशियस में है।

इस पूंजी से आप एक और परियोजना बनायेंगे राष्ट्र के आधारभूत विकास के लिए। इसे आप विदेशी निवेश बताकर फिर भारत में लायेंगे। सरकार चाहे वह किसी भी दल की हो, दल-दल की हो, आपके साथ किसी दामाद जैसा बर्ताव करेगी क्योंकि आप उसके लिए बेहद कीमती विदेशी पूंजी लेकर आ रहे हैं। अखबार और टीवी में आपके बड़े-बड़े साक्षात्कार और विज्ञापन आयेंगे। आप देश के गौरवशाली सपूत कहे जायेंगे।

व्यापार और वाणिज्य के अखबार और टीवी चैनल आपको साल के श्रेष्ठतम व्यापारी और उद्योगपति का पुरस्कार देंगे। इस सब प्रचार-प्रसार पर आपका काफी खर्च होगा। पर ये खर्चा जायज होगा। आखिर देश के विकास के लिए उद्योग, बिजली, विदेशी निवेश, स्कूल, अस्पताल सब कुछ तो आप से आ रहा है।

आप होंगे 'देश के नये कर्णधार'।

ये कड़वे लेकिन सच्चे किस्से आज हमारे चारों तरफ फैले हैं। हमारे सारे अखबार, टीवी चैनल इसी से तो भरे पड़े हैं। इसे समझाने के लिए ही हमने आपसे क्षमा मांगे बिना आपको ही एक पात्र बनाकर रख दिया था। अब उस पात्र की भूमिका से बाहर आ जायें और ऊपर की पंक्तियों में लिखे कर्णधार शब्द को दुबारा पढ़ें। तब यह कर्णधार शब्द कर्जदार दिखने लगेगा। कर्ज में डूबा यह सारा पैसा आपका-हमारा है। ❑

विकास की वेदी पर कितनी और बलियां?

❑ मेधा पाटकर एवं संदीप पांडेय

कुछ दिन पहले हमसे हमेशा के लिए विदा हुए प्रोफेसर जीडी अग्रवाल, गंगाभक्त होने के नाते अपने अनशन का अभीष्ट गंगा को ही मानते, बताते थे, लेकिन क्या उनके आग्रह में देशभर की सारी नदियों की व्यथा शामिल नहीं थी? क्या वे प्रकारांतर से देशभर की नदियों की तरफ से गुहार नहीं लगा रहे थे? प्रस्तुत है, इसी विषय की पड़ताल करता देश के ख्यात पर्यावरणविद् और आंदोलनकारी मेधा पाटकर और संदीप पांडेय का यह आलेख। –सं.

प्रोफेसर गुरुदास अग्रवाल जो अमरीका के कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय से दो वर्षों में पीएचडी करने के बाद विख्यात 'भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान' (आईआईटी), कानपुर में सीधे लक्चरर से प्रोफेसर प्रोन्नत किये गये थे और 'केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड' (सीपीसीबी) के पहले सदस्य-सचिव के रूप में उन्होंने भारत में प्रदूषण नियंत्रण हेतु कई महत्त्वपूर्ण मानक तय किये, अंततः अपनी ही सरकार को गंगा को पुनर्जीवित करने के अपने आग्रह को न समझा पाये। इसकी कीमत उन्हें अपनी जान गंवा कर देनी पड़ी। हरिद्वार में 112 दिनों तक सिर्फ नींबू पानी और शहद पर आमरण अनशन करने के पश्चात, जिसमें से आखिरी के तीन दिन निराजल रहे, 11 अक्टूबर, 2018 को ऋषिकेश के 'अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान' में हृदय-गति रुक जाने से उनका प्राणांत हो गया।

यह अचरज का विषय है कि हिन्दुत्व के मुद्दे पर चुनाव जीत कर आयी सरकार ने एक साधु (जो वे 79 वर्ष की अवस्थामें 2011 में बन गये थे) की बात गंगा जैसे पारिस्थितिकीय व धार्मिक विषय पर, जो प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के वाराणसी चुनाव प्रचार के समय केन्द्र में था, क्यों नहीं सुनी? प्रोफेसर अग्रवाल ने, जो अब स्वामी ज्ञान स्वरूप सानंद के नाम से प्रसिद्ध थे, एक 'राष्ट्रीय नदी गंगा जी (संरक्षण एवं प्रबंधन) अधिनियम, 2012' का मसौदा तैयार किया था। सरकार ने भी एक 'राष्ट्रीय नदी गंगा (संरक्षण, सुरक्षा एवं प्रबंधन) बिल-2017', जिसे 2018 में कुछ बदलाव के साथ पुनः लाया गया, तैयार किया था। स्वामी सानंद व सरकार के मसौदों में नजरिये का फर्क है।

अपने 5 अगस्त, 2018 के प्रधानमंत्री को लिखे पत्र में स्वामी सानंद ने कहा है कि मनमोहन सिंह सरकार के समय 'राष्ट्रीय पर्यावरणीय अपील प्राधिकरण' ने उनके कहने पर लोहारी-नागपाला पनबिजली परियोजना, जिसपर कुछ काम हो चुका था, को रद्द किया था और भागीरथी नदी की गंगोत्री से लेकर उत्तरकाशी तक की सौ किलोमीटर से ज्यादा लंबाई को पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्र घोषित किया था। इसका अर्थ है कि अब वहां कोई निर्माण कार्य नहीं हो सकता, लेकिन वर्तमान सरकार ने पिछले साढ़े चार सालों में कुछ भी नहीं किया है। उन्होंने अनशन शुरू करने से पहले प्रधानमंत्री को जिन चार मांगों से अवगत कराया था, वे हैं (1) स्वामी सानंद, एडवोकेट एमसी मेहता व परितोष त्यागी द्वारा तैयार गंगा के संरक्षण हेतु बिल के मसौदे को संसद में पारित करा कर कानून बनाया जाये, (2) अलकनंदा, धौलीगंगा, नंदाकिनी, पिण्डर व मंदाकिनी, छह में से वे पांच धाराएं जिन्हें मिलाकर गंगा बनती है, छठी भागीरथी पर पहले से ही रोक है, व गंगा एवं गंगा की सहायक नदियों पर निर्माणाधीन व प्रस्तावित सभी पनबिजली परियोजनाओं को निरस्त किया जाये, (3) गंगा क्षेत्र में वन कटान व किसी भी प्रकार के खनन पर पूर्णतः रोक लगायी जाये और (4) 'गंगा भक्त परिषद' का गठन हो जो गंगा के हित में काम करेगी। इस पर प्रधानमंत्री की ओर से स्वामी सानंद की मृत्यु तक कोई जवाब नहीं आया, जबकि 2013 में उनका पांचवां अनशन तब खत्म हुआ था जब 'भारतीय जनता पार्टी' के तत्कालीन अध्यक्ष राजनाथ सिंह ने उन्हें पत्र लिखकर आश्वासन दिया था कि दिल्ली में नरेन्द्र मोदी की सरकार बनने के बाद गंगा संबंधित उनकी सारी मांगें मान ली जायेंगी।

स्वामी सानंद गंगा को राष्ट्रीय प्रतीक के रूप में घोषित करवाना चाहते थे। गंगा के संरक्षण हेतु उनका मुख्य जोर इस बात पर था कि गंगा को उसके नैसर्गिक, विशुद्ध, अबाधित स्वरूप में बहने दिया जाये जिसे उन्होंने अविरल की परिभाषा दी थी व उसका पानी अप्रदूषित रहे जिसे उन्होंने निर्मल की परिभाषा दी। वे गंगा में शहरों का गंदा पानी या औद्योगिक कचरा, गंदा या साफ, किसी भी तरह से डालने के खिलाफ थे। उन्होंने गंगा किनारे ठोस अपशिष्ट को जलाने, कोई ऐसी इकाई लगाने जिससे प्रदूषण होता हो, वन कटान, अवैध पत्थर व बालू खनन, रिवर फ्रंट बनाने या कोई रासायनिक, जहरीले पदार्थ के प्रयोग पर प्रतिबंध की मांग की थी। असल में किसी भी नदी को बचाने के लिए ये आवश्यक मांगें हैं। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि प्रोफेसर जीडी अग्रवाल की यह समझ उत्तर प्रदेश राज्य सिंचाई विभाग के लिए रिहंद बांध पर एक अभियंता के रूप

में काम करते हुए बनी थी, जिसके बाद उन्होंने उत्तर प्रदेश सरकार की नौकरी छोड़ दी।

एक वैज्ञानिक होने के नाते उन्होंने अविरल की ठीक-ठीक परिभाषा दी—नदी की लंबाई में सभी स्थानों, यहां तक की कोइ बांध है तो उसके बाद भी, और सभी समय न्यूनतम प्राकृतिक या पर्यावरणीय या परिस्थितिकीय प्रवाह, जिसमें निरंतर वायुमंडल व भूमि से तीनों तरफ, तली व दोनों तटों से संपर्क के साथ-साथ अबाध प्रवाह बना रहे। उनका मानना था कि गंगा कि विशेष गुण—सड़न-मुक्त, प्रदूषण-नाशक, रोग-नाशक, स्वास्थ्य-वर्धक—तभी संरक्षित रहेंगे जब गंगा का अविरल प्रवाह बना रहेगा। इसी तरह निर्मल का मतलब सिर्फ 'प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड' द्वारा तय किये गये मानकों के अनुरूप अथवा आर. ओ. या यू. वी. का पानी नहीं है। गंगा में स्वयं को साफ करने की शक्ति है, जिसकी वजह उसके पानी में बैक्टीरिया मारने वाले जीवाणु, मानव शौच को पचाने वाले जीवाणु, नदी किनारे पेड़ों से प्राप्त पॉलीमर तत्त्व, भारी धातु एवं रेडियोधर्मी तत्त्व, अति सूक्ष्म गाद आदि की मौजूदगी है। कुल मिलाकर गंगा के ऊपरी हिस्से की चट्टानें, साद, वनस्पति, जिसमें औषधीय पौधे भी शामिल हैं, यानी परिस्थितिकी के कारण गंगा में निर्मल होने का विशेष गुण है। स्वामी सानंद का इस बात पर पूरा भरोसा था कि गंगा का संरक्षण तभी हो सकता है, जब गंगा को निर्मल व अविरल बनाये रखा जाये।

जल संसाधन, नदी घाटी विकास व गंगा संरक्षण मंत्री नितिन गडकरी सार्वजनिक रूप से कहते हैं कि उन्हें निर्मल की अवधारणा तो समझ में आती है लेकिन अविरल की नहीं। यदि वे या उनकी सरकार स्वामी सानंद की गंगा को अविरल बनाने की बात मान लेंगे तो नदी पर बांध कैसे बनवायेंगे? एक दूसरी बात, शासक दल भाजपा से सुनने को यह मिली है कि उन्हें न तो देश से मतलब है, न धर्म से और न ही लोगों से, उन्हें तो सिर्फ विकास करना है। विकास यानी ऐसा जिसमें पैसा कमीशन के रूप में वापस आता हो ताकि अगले चुनाव का खर्च निकाला जा सके। स्वामी सानंद गंगा के व्यवसायिक दोहन के सख्त खिलाफ थे। इसलिए 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ' के एक वरिष्ठ सज्जन, जो स्वामी सानंद के मामले में मध्यस्थता के लिए तैयार हुए थे, का कहना था कि सिद्धांततः तो वे स्वामी सानंद की बातों को अक्षरशः मानते हैं किन्तु सरकार चलाने की अपनी मजबूरियां होती हैं। स्वामी सानंद के साथ-साथ गंगा का भी विष्य उसी समय अंधकारमय हो गया था। देश की दूसरी नदी घाटियों, जिन पर लाखों-करोड़ों का जीवन व आजीविका निर्भर हैं, पर भी यह खतरा मंडरा रहा है।

स्वामी सानंद ने 'संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन' (यूपीए) की सरकार के समय भी पांच बार अनशन किया था, किन्तु एक बार भी उनके जीवन के लिए संकट उत्पन्न नहीं हुआ। 'राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन' (एनडीए) की सरकार में एक बार ही अनशन करना उनके लिए जानलेवा बन गया। इससे यह भी स्पष्ट है कि विकास की प्रचलित अवधारणा सामाजिक-सांस्कृतिक विचारधारा, जिसमें धर्म शामिल है या पर्यावरणीय चिन्तन, भले ही प्रधानमंत्री को 'संयुक्त राष्ट्र संघ' ने पुरस्कार दिया हो, के प्रति संवेदनशील नहीं है और वर्तमान सरकार तो कॉरपोरेट जगत के ज्यादा पक्ष में है और कम मानवीय है।

स्वामी सानंद के जाने से जो स्थान रिक्त हुआ है उसे कैसे भरा जायेगा? देश में कौन है, गंगा को बचाने की बात करने वाली दूसरी दमदार आवाज? धार्मिक आस्था वाले कुछ लोगों के लिए स्वामी सानंद तो भागीरथ की तरह थे जिन्होंने अकेले अपने दम पर गंगा का मुद्दा उठाया। स्वामी सानंद के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि हम उन सरकारों, जो ऐसी विकास की अवधारणा को मानती हैं जिसमें प्रकृति का विनाश अंतर्निहित है, उन कंपनियों को, जो ऐसी सरकारों की भ्रमित करने वाली अवधारणा को जमीन पर उतारती हैं और उन ठेकेदारों को, जो प्राकृतिक संसाधनों को लूट रहे हैं, के खिलाफ मोर्चा खोल दें।

गंगा को बचाने की लड़ाई का अभी अंत नहीं हुआ है। मातृ सदन, जिस आश्रम को स्वामी सानंद ने अपना अनशन स्थल चुना था, के प्रमुख स्वामी शिवानंद ने नरेन्द्र मोदी को चेतावनी देते हुए घोषणा की थी कि स्वामी सानंद के बाद वे व उनके शिष्य अनशन के सातत्य को कायम रखेंगे। स्वामी सानंद के 22 जून, 2018 को अनशन शुरू करने के तुरंत बाद ही एक स्वामी गोपालदास ने भी अनशन शुरू कर दिया था। 2011 में मातृ सदन के ही नवजवान साधु स्वामी निगमानंद का गंगा में अवैध खनन के खिलाफ अपने अनशन के 115वें दिन प्रणांत हो गया था, जिसमें यह आरोप है कि तत्कालीन उत्तराखंड की भाजपा सरकार से मिले हुए एक खनन माफिया ने उनकी हत्या करवाई। विकास के वेदी पर अभी और न जाने कितनी बलियां चढ़ेंगी? ❑

'सर्वोदय जगत' के सभी सुहृद पाठकों, शुभचिन्तकों, लेखकों से अनुरोध है कि अपने महत्त्वपूर्ण आलेख, रचनाएं, विचार एवं सुझाव पत्रिका के लिए भेजें। –सं.

आजकल विकास का मतलब लूट है

❑ राजेश कुमार और गौरव द्विवेदी

अधोसंरचना, खासकर ऊर्जा के नाम पर हमारे देश में जो हो रहा है, उसे सार्वजनिक संपत्ति की खुल्लम-खुल्ला लूट के अलावा क्या कहा जा सकता है? मध्य प्रदेश सरीखे राज्य में जहां खुद सरकारी दस्तावेजों के मुताबिक जरूरत से दो-ढाई गुनी बिजली पैदा हो रही है, राज्य सरकार छह निजी कंपनियों से बिजली आपूर्ति के लिए 25-25 साल का अनुबंध कर रही है। यह अनुबंध इस शर्त के साथ किया जा रहा है कि राज्य में बिजली की मांग हो, न हो यानि बिजली खरीदी जाये या नहीं, कंपनियों को निर्बाध भुगतान किया जाता रहेगा। मांग नहीं होने के कारण बगैर बिजली खरीदे 2014, 2015 और 2016 में निजी कंपनियों को कुल 5513.03 करोड़ रुपयों का भुगतान किया गया है। जाहिर है, यह भुगतान आम जनता की जेबों से किया गया है। प्रस्तुत है, इस विषय की गहरी पड़ताल करता राजेश कुमार और गौरव द्विवेदी का यह आलेख। –सं.

पिछले कुछ दशकों से भारत सरकार देश के विकास के नाम पर विशालकाय ढांचागत परियोजनाओं के निर्माण पर जोर दे रही है। 'सकल घरेलू उत्पाद' (जीडीपी) में वृद्धि से जोड़कर देखी जा रही इन परियोजनाओं में मुख्य रूप से विद्युत, बड़े बांध, सड़कें, शहरी-विकास, औद्योगिक गलियारे, 'स्मार्ट सिटी' और अन्य परियोजनाएं शामिल हैं। इन परियोजनाओं को बनाने और फिर बनाये रखने में जल, जंगल, जमीन के अलावा इनकी रीढ़-ऊर्जा या बिजली की भी भारी जरूरत होती है।

इन विशालकाय ढांचागत परियोजनाओं में लगने वाली भारी-भरकम आर्थिक लागत के अलावा पीढ़ियों से अपने-अपने ठिकानों पर बसी, भरी-पूरी आबादी को अपने संसाधनों को छोड़कर विस्थापित होना पड़ रहा है। दुनियाभर में अपनाये जा रहे विकास के इस मॉडल ने इसीलिए शहरीकरण को तेज कर दिया है और अब यही इसकी बुनियादी समस्या बनता जा रहा है। शहरों की संख्या में तेजी से इजाफा होता जा रहा है और शहर-गांव के बीच की खाईं बहुत तेज गति से बढ़ी है। अ-समान विकास ने तमाम आर्थिक गतिविधियों को शहर केंद्रित कर दिया है, परिणामस्वरूप गांव की कार्यशील युवा श्रमशक्ति शहरों की ओर पलायन कर रही है।

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की वर्तमान जनसंख्या का लगभग 31 प्रतिशत शहरों में बसा है और इसका 'जीडीपी' में 63 प्रतिशत का योगदान है। ऐसी उम्मीद है कि वर्ष 2030 तक देश की आबादी का 40 प्रतिशत शहरी क्षेत्रों में रहने लगेगा और भारत के 'जीडीपी' में इसका योगदान 75 प्रतिशत तक हो जायेगा। जाहिर है, इस विशाल आबादी के लिए बुनियादी भौतिक, संस्थागत, सामाजिक और आर्थिक ढांचे के व्यापक विकास की आवश्यकता होगी, लेकिन शहरों की बढ़ती जनसंख्या के अनुपात में घटती, अपर्याप्त सुविधाओं के कारण समस्या दिन-ब-दिन जटिल होती जा रही है। सड़क, पानी, बिजली, सीवेज, परिवहन, शिक्षा, स्वास्थ्य की कमी या वितरण में गैर-बराबरी ने एक असंतोष को जन्म दिया है, शहर नर्क कहलाने लगे हैं। शहरों की 30 प्रतिशत आबादी को पानी, 65 प्रतिशत को पर्याप्त बिजली, 71 प्रतिशत को सीवेज और 40 प्रतिशत को परिवहन की व्यवस्था उपलब्ध नहीं है। एक बड़ी आबादी के पास घर का मालिकाना हक तक नहीं है।

इन परिस्थितियों के मद्देनजर शहरी आबादी को रहन-सहन, परिवहन और अन्य अत्याधुनिक सुविधाओं से लैस करने के इरादे से भारत सरकार ने तीन महत्त्वाकांक्षी योजनाओं—'स्मार्ट सिटी', 'अटल मिशन फॉर रिजुवनेशन एंड अर्बन ट्रांसफॉर्मेशन' (अमृत) और 'सभी को आवास योजना' की शुरुआत की है। इन परियोजनाओं में 'स्मार्ट सिटी', जिसके तहत देश के 100 शहरों को 'स्मार्ट' बनाने का लक्ष्य है, सबसे अधिक चर्चा में है। इसमें मध्य प्रदेश के सात शहरों—भोपाल, इंदौर, जबलपुर, ग्वालियर, उज्जैन, सतना व सागर को शामिल किया गया है।

हालांकि 'स्मार्ट सिटी' की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं है, लेकिन दावा किया जा रहा है कि यह 'डिजिटल और सूचना प्रौद्योगिकी' (आईटी) पर आधारित होगी, जहां आम जनता को हर सुविधा पलक झपकते मिल जायेगी। एक तरफ, इन दावों की सच्चाई भविष्य के गर्भ में छुपी हुई है। अंततः इससे किसको फायदा होगा, यह प्रश्न भी हम सभी के सामने खड़ा है। दूसरी तरफ, प्रधानमंत्री समेत अनेक केंद्रीय मंत्रियों और सरकारी विशेषज्ञों द्वारा लगातार 'स्मार्ट सिटी' को 'आर्थिक समृद्धि का केंद्र', 'भारत का भविष्य' और 'विकास की रफ्तार' बताया जा रहा है। ढाई-तीन साल से दिखाये जा रहे ऐसे 'सपनों' को क्या वास्तव में जमीन पर उतारा जा सकेगा? इसके पहले भी शहरों के आधारभूत संरचनात्मक विकास के लिए 'जवाहरलाल नेहरू नेशनल अर्बन रिन्यूअल मिशन' (जेएनएनयूआरएम) और 'अर्बन इंफ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट स्कीम फॉर, स्माल एंड मीडियम टाउन्स' (यूआईडीएसएसएमटी)

जैसी योजनाओं को लाया गया था। शहरी आबादी के भले के लिए केंद्र की पिछली 'यूपीए' सरकार द्वारा लायी गयी इन परियोजनाओं के बदहाल नतीजे इसी से उजागर हो जाते हैं कि अब मौजूदा सरकार को, लगभग उन्हीं सुविधाओं की खातिर नई 'स्मार्ट सिटी' जैसी योजनाओं को लाना पड़ रहा है।

ऊर्जा की ही बात करें तो एक तरफ, उसके नाम पर प्राकृतिक संसाधन निजी कंपनियों के नियंत्रण में आते जा रहे हैं, दूसरी तरफ, वे ही कंपनियां जनता का पैसा, जनता से लेकर विकास के नाम पर लूट रही है। चाहे फिर वो कंपनियों द्वारा बैंकों से लिया गया कर्ज हो या बिजली बिल, परियोजना हेतु उपकरण खरीदने के बिल को बढ़ा कर दिखाना हो या कोयला खदान और कोयला आयात, कंपनियां चारों ओर आम जनता का पैसा लूटने में लगी हैं। बिजली परियोजनाओं का विस्तार न केवल पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों को बदहाल करता है, बल्कि इन महंगी परियोजनाओं के लिए बैंकों से भारी-भरकम कर्ज लिया जाता है। बाद में ये कंपनियां घाटे से निकाले जाने के लिए सरकार से गुहार लगाती हैं। सार्वजनिक धन की यह चोरी केवल बिजली क्षेत्र तक ही सीमित नहीं है। भारतीय बैंकों को तनावग्रस्त परिसंपत्तियों, डूबल खातों (एनपीए) में गहरे वित्तीय संकट का सामना करना पड़ रहा है। रिजर्व बैंक की रिपोर्ट के मुताबिक 31 मार्च 2018 तक भारतीय बैंकों की सकल गैर-निष्पादित संपत्ति, डूबत खाते या बुरे ऋण 10.25 लाख करोड़ रुपये के थे।

बिजली क्षेत्र में एनपीए की समस्या वर्ष 2017 में 'टाटा पॉवर' के 'तटीय गुजरात पॉवर लिमिटेड' (4000 मेगावॉट) और अदानी के 'मुंद्रा थर्मल पॉवर प्रोजेक्ट' (4660 मेगावॉट) के स्वामित्व वाली परियोजनाओं के माध्यम से उजागर हुई थीं। ये परियोजनाएं भारी नुकसान उठा रही थीं और इसकी भरपाई के लिए राज्य सरकार से जमानत मांग रही थीं। जाहिर है, सार्वजनिक धन से निजी कंपनियों को संकट-मुक्त करने वाली सरकार की प्रवृत्ति दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। मार्च 2018 में, बिजली क्षेत्र में गैर-निष्पादित यानि कर्ज वापसी ना होने वाली संपत्ति पर संसद की स्थाई समिति द्वारा एक रिपोर्ट प्रकाशित की गयी थी। इस समिति ने 34 थर्मल पॉवर परियोजनाओं की पहचान की थी जिनमें से 32 निजी क्षेत्र से संबंधित थे, जबकि केवल दो सार्वजनिक क्षेत्र से थे। समिति के अनुसार लगभग 1.74 लाख करोड़ रुपये एनपीए में तब्दील होने की कगार पर हैं और थर्मल पॉवर सेक्टर में कुल डूबत खाते की संपत्ति 17.67 प्रतिशत यानी 98.799 करोड़ रुपये है।

मध्य प्रदेश भी इससे अछूता नहीं है। वर्ष 2000 में मध्य प्रदेश विद्युत मंडल का घाटा 2100 करोड़ तथा दीर्घकालीन कर्ज 4892.6 करोड़ रुपये था जो 2014-15 में 30 हजार 739 करोड़ हो गया था। दूसरी तरफ, इन भारी-भरकम कर्जों के बावजूद, ऊर्जा सुधार के 18 साल बाद भी 65 लाख ग्रामीण उपभोक्ताओं में से 6 लाख परिवारों के पास बिजली नहीं है। 20 हजार छोटे गांवों में तो अब तक खंभे भी खड़े नहीं हुए हैं।

मध्य प्रदेश सरकार ने छः निजी बिजली कंपनियों से 25 साल के लिए 1575 मेगावाट बिजली खरीदने का अनुबंध इस शर्त के साथ किया है कि राज्य बिजली खरीदे या नहीं, कंपनी को 2163 करोड़ रुपये देने ही होंगे। राज्य में बिजली की मांग नहीं होने के कारण बगैर बिजली खरीदे विगत तीन साल में (वर्ष 2016 तक) निजी कंपनियों को 5513.03 करोड़ रुपयों का भुगतान किया गया है। प्रदेश में अतिरिक्त बिजली होने के बावजूद मध्य प्रदेश पॉवर मैनेजमेंट कंपनी ने 2013-14 में रबी में मांग बढ़ने के दौरान गुजरात की 'सूजान-टोरेंट पॉवर' से 9.56 रुपये की दर से बिजली खरीदी थी। 'मध्य प्रदेश विद्युत नियामक आयोग' ने इस पर सख्त आपत्ति भी जताई थी, लेकिन कुछ नहीं किया जा सका। वर्तमान में बिजली की उपलब्धता 18364 मेगावाट है, जबकि साल भर की औसत मांग लगभग 8 से 9 हजार मेगावाट है। बिजली की लगभग दुगुनी उपलब्धता के चलते सरकारी ताप विद्युत संयंत्रों को रख-रखाव, सुधार आदि के नाम पर बंद रखा जा रहा है।

जरूरत से कई गुना अधिक बिजली की उपलब्धता के बावजूद बिजली कंपनियों द्वारा अपनी परियोजनाओं के विस्तार के कारण बैंकों द्वारा वसूल ना की जा सकने वाली तनावग्रस्त संपत्तियां बढ़ रही हैं, जिन्हें अंततः सार्वजनिक धन के माध्यम से सरकार मुक्त करवा रही है। एक ओर निजी कंपनियां सार्वजनिक धन लूट रही हैं और दूसरी तरफ वे इन परियोजनाओं के सामाजिक और पर्यावरणीय प्रभावों को अनदेखा कर रही है। बिजली परियोजनाओं के नाम पर गांवों से और 'स्मार्ट सिटी' के नाम पर शहरों से आम जनता को उजाड़ने का काम किया जा रहा है। ❑

'सर्वोदय जगत'
के सुधी पाठकों
की सुविधा को
ध्यान में रखते हुए
पत्रिका का हर अंक
सर्व सेवा संघ-प्रकाशन की
वेबसाइट
sssprakashan.com
पर उपलब्ध है।
इस सुविधा का लाभ
पाठकगण
उठा सकते हैं। –सं.

बा-बापू : 150वीं जयंती पर विशेष

'बा'
भारत वापसी

❑ गिरिराज किशोर

गांधीजी को लेकर एक बड़ा और चर्चित उपन्यास प्रस्तुत कर चुके श्री गिरिराज किशोर ने अब बा पर कलम उठायी है। बा पर कुछ भी लिखना बहुत कठिन था। नहीं के बराबर जानकारियां। 'पहला गिरमिटिया' की सामग्री जुटाने में उन्हें कोई दो हजार पुस्तकों से मदद मिली थी। और 'बा' उपन्यास लिखते समय मुश्किल से दो पुस्तकें सामने थीं। वे उन सब लोगों से मिले, जिन्हें कस्तूरबा के बारे में थोड़ी-सी भी जानकारी थी और उन जगहों पर गये, जहां बा ने थोड़ा या बहुत समय बिताया था। इस तरह बनी यह कथा, यह इतिहास बा के अलावा खुद बापू के दो और रूपों को भी सामने रखता है–पति और पिता का रूप। प्रस्तुत है 'बा' का एक अंश, जो बा-बापू : 150 के अवसर पर क्रमशः प्रकाशित हो रहे हैं। –सं.

फीनिक्स से आये सब प्रवासी शांति निकेतन में ठहरे थे। एलबर्ट वेस्ट और पोलक हेनरी फीनिक्स प्रवासियों के साथ न आकर मोहनदास और कस्तूरबा के बंबई पहुंचने के दो सप्ताह पहले ही भारत पहुंचे थे। बा और बापू भी गुजरात से शांति निकेतन आ गये थे। जब बापू और बा शांति निकेतन आये तो गुरुदेव बाहर गये हुए थे। लेकिन चार्ली एन्ड्रूज, शांति निकेतन के शिक्षक ने उनका स्वागत किया था। बा इतने दिन बाद अपने बच्चों से मिलकर खुश थीं।

दो हफ्ते आये नहीं हुए थे कि एक तार मिला। उनके गुरु गोखले नहीं रहे थे। बा और बापू कुछ ही दिन पूर्व उनसे मिले थे। उनकी मृत्यु का समाचार उन दोनों को झटके की तरह लगा। उसी दिन अपराह्न दोनों, मगनलाल के साथ, रेल से पूना के लिए रवाना हो गये। कस्तूरबा तीसरे दर्जे में पहली बार दक्षिण अफ्रीका में तब बैठी थी जब बापू ने तीसरे दर्जे में यात्रा करना सत्याग्रह का अंग बना लिया था। उसी परंपरा का उन्होंने भारत में भी पालन किया। पर यहां का तीसरा दर्जा पाश्चात्य से प्रभावित दक्षिण अफ्रीका के तीसरे दर्जे से भिन्न था। पूना के लिए लाइन में खड़े होकर टिकट खरीदना पड़ा था। भारतीय रेल के तीसरे दर्जे की वास्तविकता बा और बापू के सामने नग्न रूप में सामने आ गयी थी। स्टाफ बदइखलाक, स्वाथी, लालची और गंदगी पसंद तो था ही, यात्री भी दुर्व्यवहार करते थे। किसी तरह वे अपने आपको इंटर क्लास में धकेल पाये थे। तब तीसरा दर्जा और इंटर क्लास भी चलते थे। यहां भी उन लोगों को रेलवे गार्ड की बदतमीजी सहन करनी पड़ी। बस अंतर इतना ही था कि मोहनदास को पीटरमेरिट्ज़बर्ग की तरह डिब्बे से बाहर नहीं फेंका गया। गोखले के दाह संस्कार से पहले पहुंचना जरूरी था। इसीलिए उन्हें अतिरिक्त पैसे का भुगतान भी करना पड़ा और असभ्यता भी सहनी पड़ी। तीसरी श्रेणी में न बैठकर इंटर में सफर करना बा और बापू की आत्मा पर बोझ की तरह था। बा की सहजता और सहनशीलता बापू को परेशान कर रही थी।

पूना की यात्रा के दौरान एक घटना घटी जो उनकी गैर-ईमानदारी के साथ उनके दाम्पत्य आत्मीयता का प्रमाण भी है। वे कल्याण पहुंचे तो बुरी तरह थके हुए थे। मगनलाल के साथ स्टेशन पर उतरे, दोनों पाइप के पानी से खुले में नहाये। कस्तूरबा के नहाने के जुगाड़ में थे कि गोखले जी का कौल नामक एक कार्यकर्ता मिल गया। वह मोहनदास को पहचानता था। उसने आकर बापू से पूछा—'आप कहां ठहरे हैं, क्यों परेशान हैं?' उन्होंने अपनी समस्या बतायी।

कौल ने बा को सैकिन्ड क्लास वेटिंग रूम के स्नानागार में ले जाकर नहाने की व्यवस्था करने का प्रस्ताव रखा। वे समझ रहे थे कि सैकिन्ड क्लास के स्नानागार में जाकर बा के नहाने का कोई अधिकार नहीं बनता। लेकिन स्थिति को देखते हुए उन्होंने जानकर उस सच्चाई से आंख चुरा ली। वे समझ रहे थे कि बा का ऐसा करना नियम विरुद्ध है। बा भी वहां जाकर नहाने के लिए उत्सुक नहीं थी। पति ने पहली बार नियमों का साथ न देकर पत्नी के साथ पक्षधरता निभाई थी।

मोहनदास करमचंद गांधी 1915 में छियालीस वर्ष के थे। छियालीस साल में वे आधे समय ही भारत में रहे होंगे। गोखले एकमात्र ही उनके पथ-प्रदर्शक थे, जो भारत में जनसेवा के क्षेत्र में उनका निर्देशन करने वाले थे। लेकिन जब वक्त आया तो गो-लोक सिखार गये। पिछली भेंट में उन्होंने मोहनदास से कहा था कि अगर तुम्हें देश को दिशा देनी है, तुम्हें देश की राजनीति को मौन रहकर समझना होगा और साथ ही साथ देश को भी जानना है। उनकी सलाह थी, 'देश का दौरा करो, देखो और जानो।'

मोहनदास ने एक योग्य और समर्पित शिष्य की तरह उनके आदेश का पालन किया। वह एक साल उनके लिए खामोशी का वर्ष रहा। एक पवित्र शपथ की तरह।

मोहनदास फीनिक्स प्रवासियों को छोड़कर कस्तूरबा के साथ देश-भ्रमण के लिए निकल गये। यह उनका परिवीक्षा काल था। बीच-बीच में कस्तूरबा की भावनाओं को ध्यान में रखकर मणिलाल और रामदास को साथ में ले लेते थे। एक बार बीच में जब हरिलाल शांति निकेतन घूमने आया था तो वह भी कुछ समय के लिए छोटी-सी यात्रा पर साथ गया था। बा हरिलाल के साथ जाने से बहुत खुश हुई थी। मन में आशा बंधी थी कि यह छोटा-सा संपर्क उन दिनों के बीच की दूरी कम कर देगा। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। उसने साफ कर दिया जैसा वह चाहेगा, वैसा करेगा।

जब कस्तूरबा को समय मिलता था मोहनदास की सहयात्री बन जाती थी। हालांकि यात्रा करना उसे पसंद नहीं था। वह घर के लिए कोई स्थाई और उचित स्थान चुनना चाहती थी। जितना देश उन्होंने घूमा वे इस बात से आश्वस्त होती गयी कि घर के लिए उनकी जन्मभूमि गुजरात से बेहतर कोई दूसरा स्थान नहीं है। देश-विदेश घूमने के बाद वह चाहती थी अपने देश में कोई कोना अपना हो। मोहनदास संपत्ति जोड़ने के पक्ष में नहीं थे। हर महिला अपना घर चाहती है। कस्तूर भी इतनी लंबी-लंबी खानाबदोशी के बाद ठौर-ठिकाना चाहती थी। मोहनदास का मन भी अपनी जन्मभूमि से जुड़ा था। उन्होंने अहमदाबाद को दो कारणों से पसंद किया। एक उसकी सुंदरता और दूसरे मस्जिदों के मध्यकालीन खंडहरों का नगर होना। पुराने जमाने में अहमदाबाद बुनकरों का नगर था। मोहनदास बुनाई-कताई के काम को पुनर्जीवित करना चाहते थे। अब वह कपड़ा मिलों का नगर बन गया था। उनका खयाल था कि कपड़ा मिलों के मालिक आश्रम बनाने में आर्थिक सहायता करेंगे। कस्तूरबा और मोहनदास वहां रहते हुए, अपने मित्रों से भी अहमदाबाद में बसने की बात कहते थे। एक वकील ने कोचरब के अपने बंगले में आश्रम बनाने का प्रस्ताव रखा। पति-पत्नी दोनों ने निरीक्षण किया और सहमति दे दी। पारदर्शिता की दृष्टि से उन्होंने घोषणा की कि उनका आश्रम हर जाति और वर्ण के लिए खुला रहेगा। यहां तक कि अछूतों के लिए भी। लोग पहले तो हंसे। कौन अछूत वहां जाकर रहेगा। उन्होंने तंज किया, 'पहले आप ऐसा अछूत परिवार तो लायें जो आपके आश्रम में रहने के लिए राजी हो।' धनाढ्य लोग कहीं न कहीं इस बात से आश्वस्त थे अछूत इस बात को जानते हैं कि अगर वे प्राचीन समय से चली आ रही परंपरा को तोड़ेंगे तो समाज उनको बरबाद कर देगा।'

25 मई, 1915 को पच्चीस लोगों का दस्ता आश्रम में रहने आया। उसमें नये-पुराने परिवार, बच्चे, औरतें सब सम्मिलित थे। कस्तूरबा खुश थी, एक बार फिर अपने घर वापिस आ गये। यहां निश्चिन्तता से रह सकेंगे, पारिवारिक समरसता के साथ। नई शुरुआत होगी। आश्रम के नौ सिद्धांत तय किये गये थे—सत्य, अहिंसा, जिह्वा पर संयम, अपरिग्रह और चोरी का पूर्ण बहिष्कार। उपरोक्त के अतिरिक्त तीन और थे—विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार, निर्भयता और सबसे महत्त्वपूर्ण अस्पृश्यता का विरोध। बापू ने सब संवासियों को नियमों को पालन करने की शपथ दिलायी थी।

कुछ समय तो आश्रम सुचारू रूप से चलता रहा था। सितंबर के महीने में जब मौसम बदल रहा था तो बापू के पास एक पत्र आया। अब आश्रमवासी और दूसरे लोग भी मोहनदास को बापू और कस्तूरबा को बा कहने लगे थे। वह पत्र बापू ने सब आश्रम-वासियों को पढ़वाया। गोखले जी के एक सहयोगी ने उन्हें लिखा था कि बंबई का एक ईमानदास एवं सम्मानित दलित परिवार आश्रम में जाकर रहना चाहता था। परिवार में पति-पत्नी और एक छोटी बच्ची है। पति एक स्कूल में अध्यापक है। आश्रमवासियों ने जब शपथ-पत्र पर हस्ताक्षर किये थे तब सोचा भी नहीं था कि इतनी जल्दी इस चुनौती को सामना करना पड़ेगा। सब सकते में थे। शपथ-पत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद विरोध करने का कोई आधार नहीं था। आश्रम को सहायता देने वालों ने भी नहीं सोचा था ऐसी स्थिति आयेगी। बापू यह सब जानते हुए भी चाहते थे कि संवासी इस स्थिति का सामना जल्दी से जल्दी करें। आखिरकार वह दिन आ ही गया जब दलित परिवार आश्रम पहुंच गया। पूरे आश्रम में चर्चा गर्म हो गयी। आखिर अब क्या होगा? कैसे निबटा जायेगा? आश्रमवासियों ने उनसे सीधे मुंह बात तक नहीं की, सीधे बापू की कुटिया की तरफ भेज दिया। वहां एक सामान्य सा आदमी धोती में लिपटा कुछ लिख रहा था। दूधा भाई, जो कुटिया में गया था, समझा कि वह आदमी महान गांधी का सहायक होगा।

दूधा भाई ने पूरा, 'हम गांधी जी से मिलना चाहते हैं, कहां मिल सकते हैं?'

'यहीं पर', बापू मुस्कुराए, 'आप दूधा भाई और दीनाबेन बंबई से आये हैं?'

वे घबरा गये। बापू ने पति-पत्नी से बैठने के लिए कहा। बच्ची को दुलराया—कितनी प्यारी बच्ची है। कुछ छोटे-मोटे सवाल पूछे। फिर अपने और आश्रम के बारे में बताकर उन्हें सहज किया। अंत में बापू ने कहा, 'आज आप हमारे मेहमान हैं, हमारे साथ खाना खायेंगे।' दूधा भाई और दीनाबेन हिचक रहे थे। उनके मन में उलझन थी पता नहीं दूसरे लोग पसंद करें या न करें। बापू ने उन्हें साथ खाने के लिए बाध्य किया।

खाना खाने के बाद दूधा भाई ने पूछा, 'बरतन कहां धोने हैं।'

बापू ने पुकारा, 'रामा, इनके बरतन धो दो।'

दूधा भाई ने जोरदारी से मना कर दिया। रामा से उनका मतलब रामदास से था। कस्तूरबा ने बापू की तरफ देखा। बापू ने बिना कुछ कहे गर्दन हिलाई, शायद वे चुप रहने का इशारा कर रहे थे।

...क्रमशः अगले अंक में

सर्वोदय दैनन्दिनी (डायरी) : 2019

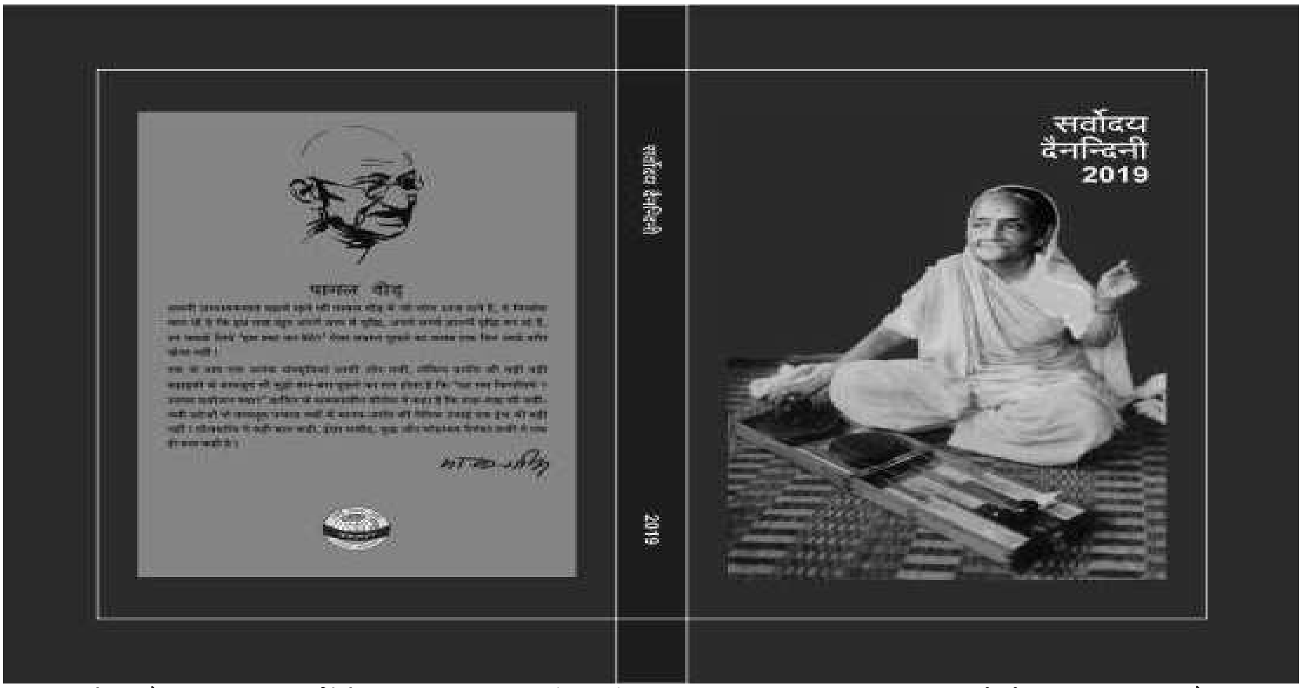

आप जानते ही हैं कि विगत कई वर्षो सेसर्व सेवा संघ प्रकाशन '**सर्वोदय दैनन्दिनी**' नाम से डायरी प्रकाशित करता आ रहा है। इस वर्ष गांधी जयंती **2 अक्टूबर** के अवसर पर '**सर्वोदय दैनन्दिनी (डायरी) : 2019**' (हिन्दी व अंग्रेजी में) की आपूर्ति की जा रही है।

गत वर्षों की भांति '**सर्वोदय दैनन्दिनी**' डबल डिमाई साइज में छापी गयी है। कागज, छपाई, बाइंडिंग आदि की कीमतों में अत्यधिक वृद्धि होने के बावजूद भी दैनन्दिनी की कीमत मात्र रुपये 170/- ही निर्धारित है।

उल्लेखनीय है कि '**सर्वोदय दैनन्दिनी :2019**' के प्रत्येक पृष्ठ पर गांधीजी की ज्ञानवर्धक व जीवनोपयोगी सूक्तियां (हिन्दी व अंग्रेजी में) दी गयी हैं। डायरी का आवरण पृष्ठ अत्यधिक आकर्षक, रंगीन व जिल्द बाइंडिंग तथा रोचक साज-सज्जा के साथ अच्छे कागज पर ऑफसेट द्वारा सुन्दर छपाई है।

डायरी विक्रेता एवं भेंट देने वाले शुभचिन्तकों, गांधीजनों व सर्वोदय विचार प्रेमी साथियों से अनुरोध है कि अग्रिम क्रयादेश शीघ्र भिजवायें ताकि हम समय से आपको डायरी की आपूर्ति कर सकें। गत वर्ष देर से क्रयादेश भिजवाने वाले साथियों को हम डायरी की आपूर्ति नहीं कर पाये थे, जिसका दुःख है।

चूंकि वर्ष 2019 गांधीजी की 150वीं जयंती का वर्ष है, जो हम सबके लिए एक विशेष अवसर है। सर्व सेवा संघ प्रकाशन गांधीजी की 150वीं जयंती के अवसर पर सर्वोदय दैनन्दिनी : 2019 के मूल्य में रुपये 20/- का विशेष रियायत करते हुए यानी रुपये 150/- में ही अपने ग्राहकों को डायरी उपलब्ध करा रहा है। *श्रीकुमार पोद्दार, मुम्बई एवं सदानन्द ट्रस्ट, अहमदाबाद द्वारा प्रदत्त सहयोग की वजह से यह रियायत संभव हुआ है। इनके प्रति प्रकाशन आभार प्रकट करता है।*

आपूर्ति के नियम

1. 1 से 100 डायरी मंगाने पर 25% कमीशन देय होगा, ट्रांसपोर्ट द्वारा भिजवाने का खर्च का आधा एवं डाकखर्च ग्राहक को देना होगा।
2. 101 से 250 डायरी मंगाने पर 30% कमीशन देय होगा। ट्रांसपोर्ट द्वारा भिजवाने का खर्च का आधा एवं डाकखर्च ग्राहक को वहन करना पड़ेगा।
3. 251 से 350 डायरी एक साथ खरीद करने पर 35% कमीशन दिया जायेगा। ट्रांसपोर्ट द्वारा भिजवाने का खर्च का आधा एवं डाकखर्च ग्राहक को वहन करना पड़ेगा।
4. 351 से अधिक डायरी मंगवाने पर 40% कमीशन एवं स्टेशन पहुंच की सुविधा दी जायेगी। ट्रांसपोर्ट द्वारा भिजवाने का आधा खर्च ग्राहक को देना होगा।
5. बिकी हुई डायरी वापस नहीं ली जायेगी।
6. डायरी की बिक्री पूर्णतया नकद, बैंक के मार्फत होती है।
7. आर्डर भिजवाते समय अपना नाम/पता/ मोबाइल नं.और निकटतम रेलवे स्टेशन का नाम साफ-साफ लिखें।
8. डायरी का आर्डर भिजवाते समय 25% रकम अग्रिम अवश्य भिजवायें। डिमाण्ड-ड्राफ्ट 'सर्व सेवा संघ प्रकाशन' के नाम भेजें।
9. रेलगाड़ी की सुविधा नहीं होने पर ट्रांसपोर्ट से पार्सल भेजने के लिए प्रकाशन स्वतन्त्र होगा।

नोटः रेलवे के असुविधाजनक नये नियमों के कारण पार्सल ट्रांसपोर्ट से मंगाना बेहतर होगा।

समुचित अपेक्षा के साथ! **–प्रकाशक**

नज़्म

फ़हमीदा रियाज़ को श्रद्धांजलि

मशहूर पाकिस्तानी शायरा फ़हमीदा रियाज़ नहीं रहीं। 21 नवंबर, 2018 को लाहौर में उनका इंतक़ाल हो गया। फ़हमीदा पाकिस्तानी फौजी तानाशाह ज़ियाउल हक़ के अत्याचारों से बचने के लिए सात साल तक वे अपने वतन से बेदखल होकर भारत में रह रही थीं। फ़हमीदा रियाज़ की प्रस्तुत नज़्म में धार्मिक कट्टरता को लेकर हिन्दुस्तानियों को दी उनकी चेतावनी हमेशा गूंजती रहेगी। –सं.

तुम बिलकुल हम जैसे निकले

तुम बिल्कुल हम जैसे निकले
अब तक कहां छिपे थे भाई
वो मूरखता, वो घामड़पन
जिसमें हमने सदी गंवाई

आखिरी पहुंची द्वार तुम्हारे
अरे बधाई, बहुत बधाई।

प्रेत धर्म का नाच रहा है
कायम हिन्दू राज करोगे?
सारे उल्टे काज करोगे!
अपना चमन ताराज़ करोगे!

तुम भी बैठे करोगे सोचा
पूरी है वैसी तैयारी
कौन है हिन्दू, कौन नहीं है
तुम भी करोगे फ़तवे जारी
होगा कठिन वहां भी जीना
दांतों आ जायेगा पसीना

जैसी तैसी कटा करेगी

वहां भी सब की सांस घुटेगी
माथे पर सिंदूर की रेखा
कुछ भी नहीं पड़ोस से सीखा!

क्या हमने दुर्दशा बनाई
कुछ भी तुमको नजर न आयी?
कल दुख से सोचा करती थी
सोच के बहुत हंसी आज आयी
तुम बिल्कुल हम जैसे निकले
हम दो कौम नहीं थे भाई।

मश्क करो तुम, आ जायेगा

उल्टे पांव चलते जाना
ध्यान न मन में दूजा आये
बस पीछे ही नजर जमाना

भाड़ में जाये शिक्षा-विक्षा
अब जाहिलपन के गुन गाना।

आगे गड्ढा है, यह मत देखो
लाओ वापस, गया जमाना
एक जाप सा करते जाओ
बारम्बार यही दोहराओ

कैसा वीर महान था भारत
कैसा आलीशान था भारत।

फिर तुम लोग पहुंच जाओगे
बस परलोक पहुंच जाओगे
हम तो हैं पहले से वहां पर
तुम भी समय निकालते रहना
अब जिस नरक में जाओ वहां से
चिट्ठी-विट्ठी डालते रहना। ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : अशोक मोती।